कुरुक्षेत्र

नवम्बर, 1995

मूल्य : पांच रुपये

ग्राम्य समाज में शिक्षा

ग्रामीण युवाओं हेतु नवीन रोजगार योजना

✍डॉ० संजय आचार्य

गांधीजी की इच्छा के अनुरूप सरकार समग्र ग्रामीण विकास के उद्देश्य को पाने हेतु प्रयत्नशील है। ग्रामीण शिक्षित युवकों को स्वरोजगार उपलब्ध कराने की दिशा में केन्द्र सरकार एक ओर महत्वपूर्ण कदम उठाने जा रही है। नवीन वर्ष 1996 से ग्रामीण शिक्षित युवकों को समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत रोजगार उपलब्ध कराने के लिए केन्द्र सरकार नये वर्ष से एक नई योजना शुरू कर रही है। इस योजना के अन्तर्गत गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले आठवीं पास या फेल ग्रामीण युवक स्वरोजगार के लिए 50 प्रतिशत सबसिडी के हकदार होंगे तथा पांच या पांच से अधिक युवकों के समूह को सवा लाख रुपये तक की सबसिडी उपलब्ध होगी। केन्द्र द्वारा समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को और अधिक प्रभावी बनाने हेतु इसका पुनर्गठन किया गया है और नये स्वरूप में यह कार्यक्रम सम्पूर्ण देश में जनवरी 1996 से प्रभावी हो जायेगा।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम में अब दो नई श्रेणियां शामिल की गई हैं। पहली श्रेणी के तहत आठवीं कक्षा पास या फेल युवक को स्वरोजगार के लिए पचास प्रतिशत सबसिडी दी जायेगी। सबसिडी की अधिकतम राशि 7,500 रुपये होगी। 25,000 रुपये की परियोजना पर बैंकों के गारंटी दिये बिना भी ऋण प्राप्त किया जा सकता है। दूसरी श्रेणी के अंतर्गत पांच या उससे अधिक गरीब युवकों को सामूहिक रूप से स्वरोजगार शुरू करने में मदद मिलेगी। इसके अन्तर्गत 50 प्रतिशत सबसिडी दी जायेगी जिसकी अधिकतम राशि 1.25 लाख रुपये होगी।

केन्द्र सरकार द्वारा बुनियादी ढांचे के विकास पर होने वाले व्यय को भी बढ़ा दिया गया है। पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिये इसे बढ़ाकर 25 प्रतिशत तथा शेष भारत के लिए इसे 20 प्रतिशत कर दिया गया है। अभी तक यह दस प्रतिशत था। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा इस कार्यक्रम में आमूलचूल परिवर्तन किये गये हैं। एक महत्वपूर्ण कदम उठाते हुये केन्द्र सरकार ने सघन जवाहर रोजगार योजना को अब रोजगार गारंटी योजना में मिला दिया है। इसी तरह इंदिरा आवास योजना और ग्रामीण आवास योजना का आपस में विलय कर दिया है।

इस महत्वपूर्ण कार्यक्रम के अन्तर्गत केन्द्र सरकार ने शैक्षणिक अर्हता को शिथिल करते हुए अब मैट्रिक की आवश्यक अर्हता को हटा लिया है और अब आठवीं पास या आठवीं फेल वाले ग्रामीण युवाओं को इस योजना के अन्तर्गत लाकर लाभ प्रदान करने का महत्वपूर्ण निर्णय लिया है। केन्द्र के इस प्रयास से हमारे देश के लाखों ग्रामीण युवा लाभान्वित होंगे और आत्मनिर्भर होकर एक मजबूत भारत का निर्माण करने में सहायक होंगे।

इस महत्वपूर्ण कार्यक्रम के द्वारा भारत सरकार गांधी जी के ग्राम स्वराज कार्यक्रम के अत्यंत निकट आ गई है और अब हम कह सकते हैं कि बापू के बताये हुये ग्राम स्वराज का मार्ग निश्चय ही निकट है। सार रूप में यही कहा जा सकता है कि भारत सरकार का यह प्रयास ग्रामीण विकास की दिशा में एक सार्थक प्रयास सिद्ध होगा।

केन्द्र सरकार द्वारा उठाये गये इस महत्वपूर्ण कदम से निश्चय ही ग्रामीण विकास की रफ्तार तेज होगी और अधिक मात्रा में स्वरोजगार प्राप्त होगा यही संकल्पनायें आज हमारे सामने हैं। आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने प्रयासों में कहीं भी शिथिलता न आने दें तभी हम 'बापू' की समग्र ग्रामीण विकास की भावनाओं को सार्थकता प्रदान कर सकते हैं।

279, शनीचरी हिल्स,
सागर (म.प्र.)

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका 'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। लघु कथाओं का भी स्वागत है। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है। 'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

वर्ष 41 अंक 1 कार्तिक-अग्रहायण 1917, नवम्बर 1995

कार्यकारी संपादक : बलदेव सिंह मदान
उप संपादक : ललिता जोशी

उप निदेशक (उत्पादन) : के. आर. कृष्णन
विज्ञापन प्रबंधक : बैजनाथ राजभर
सहायक व्यापार व्यवस्थापक : एस० एल० कोठारी
आवरण सज्जा : एम० एम० परमार

एक प्रति : पांच रुपये वार्षिक चंदा : 50 रुपये

फोटो साभार : रमेश चंद्र, फोटो प्रभाग, ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय

इस अंक में

दोपहर के भोजन की योजना		3
सच्चे स्वराज का एकमात्र आधार : पंचायती राज प्रणाली	राजेन्द्र उपाध्याय	5
ग्राम्य समाज में शिक्षा	लल्लन त्रिवेदी	7
ग्रामीण विकास में साक्षरता की भूमिका	डा. शिवा कांत सिंह	9
महात्मा गांधी का सपना साकार हुआ	राजीव पंछी	11
हमारे गांवों के ये बेरोजगार 'कुंवर साहब'	आशारानी व्होरा	16
बाल श्रम निवारण की चुनौतियां और समाधान	डा. उमेश चन्द्र अग्रवाल	18
सहकारी आंदोलन एवं हमारे किसान	प्रो. उमरावमल शाह	22
ग्रामीण विकास में कृषि आधारित उद्योगों का महत्व	डा. सूरज सिंह एवं परम पावन उपाध्याय	25
फर्क (कहानी)	मंगू	27
गांव में ऊर्जा उत्पादन और संरक्षण	प्रेम भटनागर	29
भारत में जनजातियां : समस्या एवं समाधान	मनोज कुमार द्विवेदी	31
थूमड़ा गांव का आर्थिक सर्वेक्षण	प्रो. पूरण मल	35
राजस्थान में बिछने लगा सड़कों का जाल	फारूक आफरीदी	38
मखाने की उन्नत खेती	प्रमोद कुमार राउत	43

हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी में भी प्रकाशित इस पत्रिका में शामिल लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय, कमरा नं. 655 निर्माण भवन, ए-विंग, नई दिल्ली के पते पर करें। दूरभाष : 3017422

पाठकों के विचार

मैं आपकी पत्रिका 'कुरुक्षेत्र' जनवरी 94 से नियमित पढ़ती आ रही हूं। 'कुरुक्षेत्र' का जून 1995 का अंक प्राप्त हुआ। इस अंक में मोहन नायक का लेख 'पर्यावरण चेतना और युवा वर्ग' बहुत ही ज्ञानवर्धक लगा। अगर प्रत्येक व्यक्ति जागरूक होकर अपनी उन्नति और विकास के साथ-साथ प्रकृति के प्रति मूल कर्त्तव्यों का निर्वाह भी करे तो पूरे विश्व का कायाकल्प हो जाए।

इस अंक में प्रकाशित महेश चन्द्र जोशी की कहानी भी अच्छी लगी।

पूर्णिमा गुप्ता,
बी-5 गोविन्दपुर,
इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)

आजकल मैं योजनाबद्ध रूप से 'कुरुक्षेत्र' का नियमित पाठक हूं क्योंकि ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय, भारत सरकार की मासिक पत्रिका होने के बावजूद यह निष्पक्ष और मौलिक लेख पत्रिका है। जून 95 में कु. पुष्पा अग्रवाल का लेख 'धरती का रक्षा कवच-ओज़ोन परत-एक संत्रास' बेहद ज्ञानवर्धक रहा तथा राजेश कुमार का 'उभरती संवेदनहीनता-हास्य एक समाधान' एक अनछुए पहलू पर लिखा गया विचारोत्तेजक लेख था। इसी तरह के लेखों को, विचार-प्रवाहों को पाठकों के बीच नियमित रूप से प्रकाशित करना चाहिये, क्योंकि जिस रफ्तार से 'हम'-मैं, में बदलता जा रहा है उस रफ्तार से विश्व की कोई घातक समस्या नहीं बढ़ रही है।

सुनील कुमार वर्मा,
गोविन्द गढ़, रीवा (म.प्र.),
पिन-486550

मुझे जुलाई 1995 का 'कुरुक्षेत्र' पढ़ने का प्रथम शुभ अवसर प्राप्त हुआ। जुलाई 95 अंक में पशुपालन संबंधी बहुत-सी जानकारियों के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। इस अंक में 'पंचायती राज और स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका' एवं 'ग्राम्य विकास समस्याएं और समाधान' भी काफी ज्ञानवर्द्धक अनुभव हुआ। आप कैरियर से संबंधित लेख भी प्रकाशित करते, तो अच्छा रहता। कुल मिलाकर 'कुरुक्षेत्र' बहुत ही महत्वपूर्ण व सशक्त पत्रिका लगी।

अरुण कुमार मिश्र,
साइंस कोचिंग कैम्पस, के.ई. स्कूल रोड,
समस्तीपुर-848101 (बिहार)

एक मित्र के पास सर्वप्रथम आपकी पत्रिका 'कुरुक्षेत्र' देखने को मिली। अच्छी पत्रिका है। साज-सज्जा से परिपूर्ण पठनीय सामग्रियों से भरपूर उपयोगी व रुचिकर है। ग्रामीण क्षेत्रों के लिए बहुत ही उपयोगी है। प्राप्त जुलाई 95 अंक में 'गागर में सागर' भरा गया है। 'नरसिम्हा राव सरकार के चार वर्षों में ग्रामीण विकास', डा. ए.के. अवस्थी आदि के लेख पसन्द आये। इसी तरह उपयोगी सामग्री देते रहें।

रामकृपाल गुप्त 'राम',
(कृषि रक्षा इकाई के पास),
खजनी, गोरखपुर-273212

हाल ही में मैंने, जून 1995 का 'कुरुक्षेत्र' का 'पर्यावरण प्रदूषण और मानव' अंक पढ़ा, बहुत पसंद आया।

जब पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता ग्राम परिवेश में बढ़ गई है और यह देखते हुए जब गांव में अनुकूल वैज्ञानिक, यान्त्रिक, डाक्टर कम उपलब्ध हैं तो जाहिर है 'कुरुक्षेत्र' जैसी पत्रिकाएं हम ग्रामीणों की आशा का दीप हैं।

इस 'कुरुक्षेत्र' में एक तरफ प्रदूषण रूपी दुर्योधन और दूसरी तरफ प्रकृति रूपी पांडव है, जिसको लाक्षागृह से बचाना है।

डा. विनय कुमार सिंह,
ग्राम व पो. दखिन टहल,
जिला-दुमका, पिन-815351

(शेष पृष्ठ 24 पर)

ग्रामीण बच्चों के लिए

दोपहर के भोजन की योजना

पोषक आहार बढ़ते हुए बच्चों की जरूरत है। गरीब और ग्रामीण परिवारों के स्कूल जाने वाले बच्चों में कुपोषण काफी हद तक व्याप्त है। यह भी स्पष्ट है कि न तो भूखे बच्चे से और न ही बीमार बच्चे से पढ़ने-लिखने की आशा की जा सकती है। इस बात को ध्यान में रखते हुए प्राथमिक शिक्षा के लिए पोषण संबंधी सहायता का राष्ट्रीय कार्यक्रम इस वर्ष प्राथमिक स्कूलों में शुरू किया गया। यह कार्यक्रम 'दोपहर का भोजन योजना' के नाम से प्रचलित है।

पहली बार दोपहर के भोजन का कार्यक्रम सभी राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों में लागू होगा, जिससे स्कूलों में हाजिरी बढ़ेगी, बीच में पढ़ाई छोड़ने वाले बच्चों की संख्या कम होगी तथा बच्चों के पोषण की स्थिति सुधरेगी। अंततः प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम को एक नया बल मिलेगा।

केन्द्रीय शिक्षा सचिव की अध्यक्षता में एक समिति ने प्राथमिक शिक्षा, पोषण, स्वास्थ्य तथा समन्वित बाल विकास सेवाओं के बच्चों की देखरेख संबंधी व्यापक कार्यक्रम के परिप्रेक्ष्य में शिक्षा के लिए पोषण संबंधी सहायता प्रदान करने पर विचार किया।

इस योजना के दायरे में अगले तीन वर्ष में पांच लाख से अधिक सरकारी, स्थानीय निकायों तथा निजी सहायता प्राप्त प्राथमिक स्कूलों के पहली से लेकर पांचवी कक्षा तक के लगभग 11 करोड़ बच्चों को लाया जाएगा।

इस योजना के अंतर्गत हर महीने प्रति बच्चा तीन किलोग्राम की न्यूनतम दर पर अनाज उपलब्ध कराया जाएगा, लेकिन इसके लिए शर्त यह होगी कि बच्चे की स्कूल में 80 प्रतिशत हाजिरी हो। इस कार्यक्रम के लिए खाद्यान्नों की पूरी आवश्यकता केन्द्र सरकार निःशुल्क पूरा करेगी। गांव में अनाज पहुंचाने को प्रोत्साहन के लिए केन्द्र द्वारा 25 रुपये प्रति क्विन्टल की दर से राज्य सरकारों को अनाज की ढुलाई और उसकी सम्हाल के खर्चे में मदद दी जाएगी।

शुरुआत 2408 ब्लाकों से

यह योजना फिलहाल सुनिश्चित रोजगार योजना के अंतर्गत आने वाले 2408 ब्लाकों में शुरू की गई है। इन ब्लाकों में दूर-दराज तथा आदिवासी इलाकों में रहने वाले गरीबों की काफी संख्या है और इनमें 40 ब्लाक ऐसे हैं जिनमें महिलाओं की साक्षरता दर कम है। दूसरे वर्ष, ऐसे 2005 ब्लाकों को इस योजना के दायरे में लाया जाएगा, जिनमें महिला साक्षरता दर, 40 प्रतिशत की राष्ट्रीय औसत से कम है। शेष 828 ब्लाकों में यह योजना 1997-98 में शुरू की जाएगी। कार्यक्रम को चरणबद्ध तरीके से लागू करने से इस योजना के प्रभावशाली क्रियान्वयन के लिए प्रशासनिक व्यवस्था करने में आसानी होगी।

पंचायतों की महत्वपूर्ण भूमिका

इस योजना को लागू करने में पंचायतों और नगरपालिका के लिए महत्वपूर्ण भूमिका रखी गई है तथा उनसे अपेक्षा की गई है कि वे खाना तैयार करने के लिए जरूरी व्यवस्था करेंगे। उन्हें यह कार्यक्रम गैर-सरकारी संगठनों, महिला समूहों और अभिभावक-शिक्षक परिषदों के माध्यम से चलाने की छूट होगी। वे इस बात का निर्णय भी कर सकेंगे कि बच्चों को कैसा खाना दिया जाए। खाना पकाने, देख-भाल करने और रसोई आदि की व्यवस्था पर आने वाले कुल खर्च को निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रमों के अंतर्गत सहायता के द्वारा पूरा किया जाएगा।

आशा की जाती है कि इस योजना से सबके लिए प्रारंभिक शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त करने में मदद मिलेगी क्योंकि इस योजना से बीच में पढ़ाई छोड़ने वाले बच्चों की संख्या कम होगी और बच्चों का पोषण स्तर भी सुधरेगा। हालांकि बीच में ही पढ़ाई छोड़ने वाले बच्चों की दर में गिरावट आई है, फिर भी पहली से पांचवीं कक्षा के लिए यह दर 36 प्रतिशत है जो कि काफी अधिक है।

गरीबी उन्मूलन को सर्वोच्च प्राथमिकता

'दोपहर का भोजन योजना' गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों को मजबूत करने को दी जा रही उच्च प्राथमिकता के अनुरूप है। पहले वर्ष के लिए इस योजना में 610 करोड़ रुपये से अधिक की व्यवस्था की गई है, लेकिन जब यह योजना पूरी तरह अमल में लाई जाएगी तब इस की लागत 2084.90 करोड़ रुपये हो जाएगी।

केन्द्र सरकार का शिक्षा पर योजना परिव्यय 1991-92 में 977 करोड़ रुपये था जो 1995-96 से बढ़कर 1825 करोड़ रुपये हो गया है। प्रधान मंत्री ने पहले से ही नौवीं योजना के अंतर्गत सकल राष्ट्रीय उत्पाद के छह प्रतिशत हिस्से को शिक्षा के लिए आवंटित करने के सरकार के निर्णय की घोषणा की है।

'दोपहर का भोजन कार्यक्रम' के अंतर्गत भारतीय खाद्य निगम ने 15 अगस्त से लेकर 31 अक्तूबर 95 तक 9 करोड़ टन से अधिक गेहूं और 14 करोड़ 70 लाख टन चावल जारी किया है।

गुणवत्ता पर जोर

माडर्न फूड इंडस्ट्रीज लिमिटेड की फरीदाबाद, दिल्ली, कानपुर और भागलपुर उत्पादक इकाइयों को उच्च पोषण वाले संसाधित आहार का उत्पादन बढ़ाने के लिए निर्देश दिए गए हैं ताकि स्कूल जाने वाले बच्चों के दोपहर के भोजन, गर्भवती महिलाओं और दूध पिलाने वाली माताओं की पोषण संबंधी अतिरिक्त आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

लघु कथा

प्रतिबद्धता

हरदेव कृष्ण

सुरती फांक कर रामलखन ने फिर कहा, "इस बार गांव में शराब का ठेका बिल्कुल नहीं खुलना चाहिए।" "इसका जिक्र तो मैं कई बार कर चुका हूं।" गांव के नए सरपंच ने उत्तर दिया। "तभी तो मैंने चुनाव जितवाने में तुम्हारी मदद की थी।" रामलखन ने टेढ़ी आंखों से सरपंच की ओर देखते हुए कहा। उसके देखने का ढंग निराला और रहस्य भरा था, जिसे भांपने में सरपंच को ज्यादा सोचना नहीं पड़ा। अतः बोला, "मैं इस गांव में अवैध ढंग से निकाली गई शराब भी बिकने नहीं दूंगा।" यह सुनकर रामलखन ने फांकी हुई सारी सूरती बाहर थूक दी और दांतों में उंगली फेरते हुए सरपंच की ओर खा जाने वाली नजरों से देखा। "मैं गांव की भलाई के लिए यह पग उठाने में नहीं हिचकिचाऊंगा।" सरपंच के स्वर में आत्मविश्वास था।

रामलखन थोड़ी देर चुप रहा फिर बोला, "शायद तुम मेरी पहुंच और शक्ति को भूल रहे हो और यह भी भूल गए कि चुनाव के दौरान मैंने तुम्हारी कितनी मदद की थी।" इस पर सरपंच ने कहा, "रामलखन यह न भूलो कि मेरे पास भी जनशक्ति है, रही बात चुनाव की, तब मैं एक साधारण व्यक्ति था, परंतु आज मैं एक जिम्मेदार और नेक-धर्म भरे सरपंच के पद पर गांव की सेवा व भलाई के लिए चुना गया हूं। यही नहीं मैंने इस लक्ष्य के लिए, प्रभु को साक्षी मानकर शपथ भी उठा रखी है, मैं शपथ तोड़कर क्यों पाप का भागीदार बनूं?" अवैध शराब निकालने वाला, रामलखन अपने आपको अपमानित महसूस करने लगा। गुस्से में कांपता हुआ बोला, "सरपंच साहब मैं तुम्हें देख लूंगा।" इतना कह वह चला गया। सरपंच ने विचलित हुए बिना किवाड़ बंद कर दिए।

ग्रा. पो. - मल्लाह (पिंजौर),
पिन : 134102

सच्चे स्वराज का एकमात्र आधार : पंचायती राज प्रणाली

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 126वीं जयंती के अवसर पर नयी दिल्ली में आयोजित पंचायती संस्थाओं के अध्यक्षों का सम्मेलन एक ऐतिहासिक आयोजन सिद्ध हुआ है। लोकतंत्र का फायदा सही अर्थों में आम आदमी को दिलाने और उसे अधिकार संपन्न बनाने के लिए स्वर्गीय राजीव गांधी ने पंचायती राज अधिनियम में संशोधन करने की दिशा में पहल की थी। बाद में संसद ने इस संशोधन को मंजूरी देकर पंचायती राज संस्थाओं और उनसे जुड़े आम लोगों को विकास की प्रक्रिया में घनिष्ठ रूप से भागीदार बनाया था। पंचायती राज संस्थाओं के अध्यक्षों का सम्मेलन अब तक की उपलब्धियों का जायजा लेने और कमियों और समस्याओं को दूर करने के लिए एक अच्छा मंच सिद्ध हुआ।

सम्मेलन के महत्व को रेखांकित करते हुए प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिम्ह राव ने कहा यों तो संसद और विधान सभाओं में जनता के प्रतिनिधि एकत्र होते रहते हैं लेकिन सारे देश के प्रतिनिधियों का पंचायती राज अध्यक्षों के सम्मेलन में एक साथ इकट्ठा होना बड़ा ही दुर्लभ अवसर है। इसे नये इतिहास की नींव बताते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि 1947 में देश की आजादी के बाद भारत की कोटि कोटि जनता को सही अर्थों में स्वराज प्राप्त हो रहा है। उन्होंने कहा :

"हमारे सांसद 800 के करीब हैं, दिल्ली में, पार्लियामेंट में और सारे राज्यों की सरकारों में, राज्यों की विधान सभाओं में, विधान परिषदों में। कुल मिलाकर उनकी गिनती बनती है पांच हजार जिनके आधार पर लोकतंत्र इस देश में चल रहा है। ...आज पंचायती राज के आने के बाद आप हिसाब लगाइये कि कहां पांच हजार, कहां पचास लाख। यानी पांच हजार पर पांच लाख हुए। तो सौ गुना हुए। .....पचास लाख हुए तो हजार गुना हुए। तो हजार गुना लोग आज तैयार हैं इस देश में, जिनकी दिलचस्पी लोकतंत्र में बन गयी है। आज पचास लाख लोग तैयार हो जाएंगे, अपना सिर कटवाने के लिए, इस लोकतंत्र को बचाने के लिए।"

आजादी के बाद देश में पंचायती राज प्रणाली की स्थिति का जिक्र करते हुए श्री नरसिम्ह राव ने कहा कि 1959 में जब यह प्रणाली लागू की गयी तो पंचायत समितियां आदि बनीं। लेकिन उनका स्वरूप कुछ और था। उनके नियमित चुनाव की कोई व्यवस्था नहीं की गयी। कई राज्यों में तो 17-17 साल तक पंचायतें बिना चुनाव के रहीं। स्वर्गीय राजीव गांधी ने इस कमजोरी को दूर करने के लिए पहल की और पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव नियमित रूप से कराने के लिए संविधान में संशोधन के लिए कदम उठाया। सच्चे अर्थों में लोकतंत्र के विकेन्द्रीकरण की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण शुरुआत थी।

प्रधानमंत्री ने कहा कि विकास कार्यक्रम तभी सफल हो सकते हैं जब लोग उनके बारे में जागरूक हों और उनमें दिलचस्पी लें। गरीबी दूर करने के कार्यक्रमों का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा, "आपके गांवों में जो काम होता है वह आप जिस खूबी से कर सकते हैं, उस खूबी से मैं नहीं कर सकता। आपके गांव में किसी गरीब की रक्षा करनी हो, मदद करनी हो तो यह काम आप बखूबी कर सकते हैं, मैं नहीं।" प्रधानमंत्री ने यह बात स्वीकार की कि गांव में कौन व्यक्ति गरीब, निराश्रित और सहायता का हकदार है, यह बात गांव के लोग बेहतर जानते हैं। इस बारे में सरकार के पास जो सूचना सरकारी रिपोर्टों के रूप में आती है उनमें गलती की गुंजाइश रहती है। हो सकता है किसी नौजवान को गलती से वृद्धावस्था पेंशन मिलने लगे। लेकिन जब इस तरह के कार्यक्रमों की जिम्मेदारी पंचायतों को सौंप दी जाएगी तो ऐसी गलती की कोई संभावना नहीं रहेगी। इस तरह लोगों को पूरा न्याय मिल सकेगा।

प्रधानमंत्री ने कहा कि अरबों रुपया खर्च करने के बावजूद हम गरीबी दूर करने में पूरी तरह सफल नहीं हो पाए हैं। इसका कारण यही है कि पैसा कहीं बीच में लीक

होता चला जा रहा है।.....आज हमें मालूम हो गया है कि पंचायती राज एक ऐसा माध्यम है जिसके जरिए हम पैसा सही तरीके से खर्च करा सकते हैं। जो इससे लाभान्वित होने वाले व्यक्ति हैं, गांवों में उन तक पैसा पहुंचाने के लिए हमें एक माध्यम मिला है ।..... पैसा पहुंचाना हमारा काम है। लेकिन जब सही आदमी को सही मदद मिलती है तो वह सफलता आपकी रहेगी और आप ही के जरिए यह काम होगा। यह आपका इम्तहान भी होगा और आपकी सफलता भी होगी।''

प्रधानमंत्री ने कहा कि नयी पंचायती राज प्रणाली के तहत केन्द्र सरकार पंचायतों को धन उपलब्ध करायेगी। ऐसी व्यवस्था की जा रही है जिससे केन्द्र और राज्यों के बीच राजनीतिक मतभेदों के कारण पंचायतों को धनराशि मिलने में कोई अड़चन न आने पाये। उन्होंने इस मामले में दलगत मतभेदों को भुलाकर कार्य करने की आवश्यकता पर भी जोर दिया।

नयी पंचायती राज प्रणाली को सफल बनाने के लिए पंचायत प्रतिनिधियों के प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था करना बहुत जरूरी है। श्री नरसिम्ह राव ने भी इस आवश्यकता को महसूस करते हुए अपने भाषण में कहा कि ऐसा कोई काम नहीं है जिसमें ट्रेनिंग की जरूरत नहीं होती। ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय इसके लिए आवश्यक कदम उठा रहा है। आकाशवाणी और दूरदर्शन जैसे सशक्त माध्यम इस कार्य में बड़े मददगार साबित हो सकते हैं। देश में हरित क्रांति लाने में संचार माध्यमों ने अच्छा कार्य किया है। प्रधानमंत्री ने ऐसे कार्यक्रम बनाने की आवश्यकता पर जोर दिया जिससे सभी पंचायत प्रतिनिधियों के लिए समुचित प्रशिक्षण की व्यवस्था हो और पंचायती राज के बारे में जो भी समझने की बातें हैं, उन सबके बारे में पूरी जानकारी टेलीविजन के माध्यम से मिलती रहे।

नये पंचायती राज कानून के तहत पंचायतों को जहां अनेक अधिकार सौंपे गये हैं, वहीं उनके दायित्व भी बहुत बढ़ गये हैं। गांवों के विकास, सामाजिक सुधार और ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी दूर करने का महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व अब काफी हद तक पंचायतों पर आ गया है। इस कार्य में पूरी आर्थिक सहायता देने का आश्वासन देते हुए प्रधानमंत्री ने पंचायत अध्यक्षों से यह सुनिश्चित करने का आग्रह किया कि केन्द्र द्वारा उपलब्ध करायी जा रही धनराशि सही लोगों तक पहुंचे। उन्होंने कहा कि ''पंचायतों के जरिए समाज सुधार का काम बहुत अच्छे तरीके से कराया जा सकता है। अब यदि कहीं किसी ने कोशिश नहीं की तो मैं समझता हूं कि यह कोशिश की जानी चाहिए।.....हमारे देश में एक ओर विकास हो रहा है, लेकिन विकास केवल सड़क या उद्योग के कार्यक्रम तक महदूद नहीं रहा है। विकास बहुत बड़ी चीज है, जिसमें इन्सान का दिमाग भी आता है। यह न हो तो देश के विकास का कुछ मतलब नहीं है।''

नयी पंचायती राज प्रणाली को सफल बनाने में केन्द्र की ओर से हर-संभव सहायता का आश्वासन देते हुए प्रधानमंत्री ने पंचायत अध्यक्षों से कहा कि वे पूरी लगन से इस लक्ष्य को प्राप्त करने में जुट जाएं। उन्होंने पंचायत अध्यक्षों से ''सारे देश के लिए, जनता के लिए, पंचायती राज के लिए, देश में लोकतंत्र को कायम रखने के लिए और उसकी नींव को पक्का बनाने के लिए'' कार्य करने का संकल्प लेने का भी आग्रह किया।

प्रस्तुति : राजेन्द्र उपाध्याय

'कुरुक्षेत्र' का नया पता

'कुरुक्षेत्र' का सम्पादकीय कार्यालय अब कृषि भवन से स्थानान्तरित होकर निर्माण भवन चला गया है। पत्रिका का नया पता इस प्रकार है :

कमरा न : 655, 'ए' विंग,
निर्माण भवन,
नई दिल्ली-110011

कृपया सभी रचनाएं और पत्रादि नये पते पर भेजें। **—सम्पादक**

ग्राम्य समाज में शिक्षा

लल्लन त्रिवेदी

सामाजिक जागृति या जन चेतना में शिक्षा की विशिष्ट भूमिका है। किसी भी देश के विकास का मूलाधार है शिक्षा। शिक्षा का महत्व सर्वविदित है। विशेष रूप से सुदृढ़ लोकतंत्र में, राष्ट्रीय एकता, सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन तथा न्याय संगत समाज की स्थापना के लिए शिक्षा का सभी तक प्रसार अत्यन्त आवश्यक है। राष्ट्रीय विकास की प्रक्रिया में, समुचित योगदान के लिए प्रत्येक नागरिक का शिक्षित होना अनिवार्य है।

ग्राम्य समाज में शिक्षा की आवश्यकता

वर्तमान में ग्राम जीवन की पेचीदगियां बहुत बढ़ गयी हैं। आये दिन नये-नये कानून पारित हो रहे हैं। समस्याओं की बाढ़-सी आ गयी है। परन्तु स्थिति यह है कि हमारे देश में करोड़ों व्यक्ति अशिक्षित हैं और इस संख्या का लगभग 75 प्रतिशत भाग गांवों में बसता है। गांवों के किसान, खेतिहर मजदूर, स्त्री, पुरुष सभी प्रायः निरक्षर हैं। वे हस्ताक्षर तक करना नहीं जानते और उनकी इस निरक्षरता का दुरुपयोग करते हैं साहूकार, महाजन। आज के युग में एक अच्छा किसान होने के लिए भी साक्षर होना अत्यावश्यक है। ग्राम समाज में अनेकानेक कुप्रथाएं, समस्याएं यथा जातिवाद, बेरोजगारी, शोषण, भ्रष्टाचार, भ्रांतियां, अन्ध विश्वास आदि व्याप्त हैं जिनका शैक्षिक रूप से ही समाधान सम्भव है। शिक्षा जीवन, समाज और राष्ट्र की समकालीन बदलती हुई परिस्थितियों और आवश्यकताओं के बीच समन्वय सेतु है। शिक्षित मनुष्य का जीवन ही उन्नतशील होता है और वह अपने बाल-बच्चों के सर्वतोन्मुखी उत्थान के महत्व को भली भांति समझ सकता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति

हमारे जनतंत्र में सन् 1986 से राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू की गई है। उसमें प्रावधान है कि बुनियादी स्तर पर हर गांव में कम से कम एक विद्यालय की व्यवस्था अनिवार्य रूप से की जाएगी तथा इस बात पर विशेष निगरानी रखी जाएगी कि गांव देहात के कामगारों और पिछड़े वर्गों के बच्चे विद्यालय में प्रवेश लेने के बाद पढ़ाई बीच में न छोड़ दें। पढ़ाई बीच में छोड़ देने के वास्तविक कारणों का पता लगाकर उन्हें दूर करने का प्रयास किया जाएगा तथा गांवों में प्रौढ़ शिक्षा को विशेष बढ़ावा दिया जायेगा और प्रत्येक शिक्षित को प्रेरित किया जायेगा कि वह हर अशिक्षित वयस्क को साक्षर बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे। भारतीय संतों ने कहा भी है–

व्यक्ति परिवार के हित में, परिवार ग्राम के हित में, ग्राम जनपद के हित में त्याग करे तथा समस्त प्राणियों के हित के लिए सर्वस्व त्याग करें। कहने का तात्पर्य है, यदि भारत की यह प्राचीन शिक्षा लोग अपना लें तो ग्रामीण साक्षरता की दिशा में महत्वपूर्ण उपलब्धि हासिल हो सकती है। लेकिन सच तो यह है कि हमारी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में संकलित प्रतिबद्धता के बावजूद भी ग्रामीण साक्षरता के विकास की गति धीमी है।

साक्षरता एवं शिक्षा की स्थिति

संसार के कुल निरक्षर प्रौढ़ों की आबादी का 30 प्रतिशत तथा विद्यालय न जाने वाले बच्चों की संख्या का 22 प्रतिशत भाग भारत में निवास करता है और 15 से लेकर 35 वर्ष तक के लोगों में सबसे अधिक निरक्षरता व्याप्त है। स्पष्टतया निरक्षरों की भारी भीड़ हमारे लिए चिन्ता का विषय है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने अपनी एक विज्ञप्ति में स्पष्ट किया है कि इस शताब्दी के अन्त तक पूर्ण साक्षरता का लक्ष्य प्राप्त कर लिया जायेगा। वैसे साक्षरता के प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में सरकार ने जो कार्य किया है, वह अत्यन्त सराहनीय है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार सन् 1951 में साक्षरता 18.33 प्रतिशत थी जो सन् 1991 में बढ़कर 52.22 प्रतिशत हो गयी है। तथापि विश्व बैंक के एक सर्वेक्षण के अनुसार इक्कीसवीं सदी के आरम्भ तक विश्व के सम्पूर्ण निरक्षरों की लगभग आधी संख्या हमारे देश में होगी।

इस संदर्भ में जो सर्वाधिक महत्व की बात है, वह यह कि अन्ततः क्या किया जाए कि अशिक्षित लोग सहज

समझ जाएं कि शिक्षा ही व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का माध्यम है और वे इस कार्य में पूर्ण मनोयोग से सहयोग करना शुरू कर दें। साक्षरता की समस्या सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों पर आधारित है। फलतः प्रायः निरक्षरता उन्मूलन की दिशा में जो सबसे सार्थक एवं प्रभावी कदम उठाया जा सकता है, वह है निरक्षरों का सामाजिक व आर्थिक समुन्नयन।

ग्राम्य शिक्षा : एक महत्वपूर्ण अभियान

ग्रामीण जीवन की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक पुर्नरचना करने में साक्षरता एक महत्वपूर्ण उपक्रम है और यह आज की प्राथमिक आवश्यकता भी है। ग्राम्य समाज में महिला शिक्षा के द्वारा ही नई जागृति एवं चेतना विकसित की जा सकती है। वस्तुतः साक्षरता की सार्थकता के क्षेत्र हैं–

1. राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता का विकास;
2. देश, जाति और समुदाय का समुत्थान;
3. धर्म निरपेक्षता की भावना का विकास;
4. श्रम के शाश्वत मूल्य का प्रतिस्थापन;
5. सामाजिक मान्यताओं, परम्पराओं, आस्था, विश्वास और मूल्यों का शैक्षिक रूप से मूल्यांकन;
6. जनसंख्या नियन्त्रण;
7. आर्थिक एवं श्रम शोषण से विमुक्ति;
8. प्राकृतिक संसाधनों का समुचित दोहन;
9. पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता;
10. सामाजिक आकांक्षाओं, अपेक्षाओं और आवश्यकताओं से अनुकूलन;
11. वैज्ञानिक चिन्तन का विकास;

ग्रामीण निरक्षरता उन्मूलन हेतु प्रभावी कार्य योजना

ग्राम्य विकास के संदर्भ में निरक्षरता उन्मूलन के लिए बुनियादी स्तर पर ही कार्यवाही की जानी चाहिए। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने स्पष्ट रूप से इस तथ्य को उद्घाटित किया था–"मेरा गरीब देश खर्चीली शिक्षण व्यवस्था का भार नहीं वहन कर सकता। इसलिए ग्राम शिक्षकों की घरेलू शिक्षा पद्धति पुनः संचालित की जाए क्योंकि इससे अधिक श्रेष्ठ एवं कारगर कोई भी वैकल्पिक व्यवस्था नहीं है।" अतः इस विचार की प्रासंगिकता झुठलाई नहीं जा सकती। बहरहाल प्रायोगिक तौर पर निम्न उपाय प्रस्तावित किए जा सकते हैं :

1. शिक्षा का जीवन की प्राथमिक और अनिवार्य आवश्यकताओं से सीधा संबंध स्थापित किया जाए।
2. विभिन्न व्यवसायों में दक्षता प्रदान करने वाले प्रशिक्षण कार्यक्रमों का संचालन किया जाए।
3. प्राथमिक शिक्षा एवं जनशिक्षा कार्यक्रम साथ-साथ चलें। पूरक वैकल्पिक कार्यक्रम चलाए जाएं ताकि बीच में पढ़ाई छोड़ देने वाले बच्चों की शिक्षा संबंधी जरूरतों को पूरा किया जा सके।
4. दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम को प्रभावी ढंग से चलाया जाए।
5. पिछड़े वर्ग के सामाजिक-आर्थिक समुन्नयन पर विशेष ध्यान दिया जाए।
6. शिक्षा क्षेत्र के स्वैच्छिक संगठनों के व्यवसायीकरण की प्रवृत्ति पर अंकुश लगाया जाए तथा स्थान और छात्रों की परिस्थिति के अनुरूप पाठ्यक्रम रखे जाएं।
7. शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत सरकारी तथा स्वयंसेवी संस्थाओं का भरपूर सहयोग प्राप्त किया जाए।

अन्ततः

शताब्दियों से शोषित एवं पिछड़े ग्राम्य समाज में आज भी संवैधानिक समानता की स्वतन्त्रता की गारन्टी के बावजूद अशिक्षा, बेरोजगारी और आर्थिक विषमता विद्यमान है। अतः राष्ट्रीय शिक्षा नीति के ग्रारूप में उल्लिखित समानता, स्वतन्त्रता एवं न्याय के लिए ग्राम समाज की साक्षरता एवं शिक्षा को सशक्त आन्दोलन बनाना चाहिए और इतना ही नहीं, ग्राम्य शिक्षा का उद्देश्य मात्र साक्षरता तक सीमित न रहकर जीवन स्तर में सुधार के रूप में परिलक्षित होना चाहिए तभी किसी सार्थक सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन की आशा की जा सकती है। हमारे गांवों का उज्ज्वल भविष्य ग्रामीणों के धर्नाजन तथा अपने वातावरण से संबंधित समस्याओं को हल कर लेने की योग्यता पर निर्भर है और यह योग्यता शिक्षा के द्वारा बढ़ाई जा सकती है। अतः शिक्षा ही विकास प्रक्रिया का प्रथम साधन है।

द्वारा प्रधान डाकघर, बांदा
बांदा, उ. प्र. (210001)

ग्रामीण विकास में साक्षरता की भूमिका

डा. शिवा कान्त सिंह

भारत एक कृषि प्रधान देश है। परंतु कृषि के पिछड़ेपन का प्रमुख कारण है किसानों की निरक्षरता। जब तक कृषक शिक्षित नहीं होंगे, तब तक वे कृषि विज्ञान से अपरिचित रहेंगे। फलस्वरूप कृषि कार्य विधिवत व वैज्ञानिक तरीकों के सम्पन्न नहीं हो सकेगा जिससे देश की अर्थव्यवस्था प्रभावित होगी। गांव के विकास से ही देश का समग्र विकास सम्भव है, इसीलिए गांवों के विकास के लिए समय-समय पर अनेक कार्यक्रम लागू किये गये लेकिन अपेक्षित सफलता नहीं मिली।

साक्षरता ग्रामीण विकास का अपरिहार्य अंग है तथा दोनों एक दूसरे के पूरक भी हैं क्योंकि जहां एक ओर शिक्षित ग्रामीण ही विकास कार्यक्रमों को सही रूप से समझ सकते हैं, वहीं दूसरी ओर विकसित अर्थव्यवस्था के लोग साक्षरता का महत्व समझते हैं। इसकी उपयोगिता को स्वीकारते हुए अरस्तु ने कहा था-"किसी भी देश का भाग्य उसके युवकों की शिक्षा पर निर्भर करता है।" इसी सदर्भ में प्रो. गुन्नार का मानना है "बहुत बड़ी जनसंख्या को निरक्षर छोड़कर, राष्ट्रीय विकास कार्यक्रम शुरू करने की बात, मुझे निरर्थक प्रतीत होती है।" राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भी "शिक्षा को, बुद्धि के विकास और समाज के पुनर्गठन के लिए आधारभूत साधन माना।" जवाहरलाल नेहरू ने भी ठीक ही कहा था "राष्ट्रीय एकता के प्रश्न में, जीवन की प्रत्येक वस्तु आ जाती है किंतु शिक्षा का स्थान इन सबसे ऊपर है।"

सन् 1985 के बाद से ही भारत सरकार ने साक्षरता पर विशेष ध्यान देना शुरू किया। इसी तारतम्य में 1988 में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन की स्थापना की गई। जिला स्तर पर साक्षरता समिति गठित की गयी जिसका अध्यक्ष जिलाधीश होता है। देश का पहला पूर्ण साक्षर जिला केरल का अर्नाकुलम है जोकि 1990 में पूर्ण साक्षर होने का गौरव प्राप्त कर चुका है।

सन् 1991 की जनगणनानुसार विश्व की कुल निरक्षर जनसंख्या के लगभग 30 प्रतिशत निरक्षर भारत में ही हैं। देश में प्रौढ़ शिक्षा की समस्या बड़ी विकराल है, इसके अंतर्गत 15-35 आयु वर्ग को रखा गया है, क्योंकि यह कार्यशील जनसंख्या का सबसे सक्रिय वर्ग होता है। 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में 15-35 आयु वर्ग में लगभग 12.13 करोड़ निरक्षर हैं जिनमें से अधिकांश ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते हैं। वर्तमान में देश के लगभग 83 प्रतिशत जिलों में सम्पूर्ण साक्षरता अभियान चलाया जा रहा है। इस आंदोलन द्वारा आठवीं पंचवर्षीय योजना में 10 करोड़ निरक्षरों को पढ़ना-लिखना सिखाकर साक्षर बनाने का लक्ष्य रखा गया है। इस लक्ष्य की पूर्ति के साथ-साथ निश्चित ही ग्रामीणों में जागरूकता आने से ग्रामीण विकास को बल मिलेगा।

निरक्षर समाज से न तो राष्ट्र के निर्माण में मानव-शक्ति का सहयोग प्राप्त किया जा सकता है और न ही प्राकृतिक संसाधनों का देश के आर्थिक विकास हेतु उचित विदोहन हो सकता है। इस प्रकार साक्षरता ही एक मात्र ऐसा साधन है जिसके द्वारा व्यक्ति और समाज में चेतना जागृत करके उसकी कार्यक्षमता बढ़ायी जा सकती है, जिससे व्यक्ति और समाज दोनों का विकास किया जा सकता है। प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम का महत्व न केवल प्रौढ़ों को अक्षर-ज्ञान देने से है, बल्कि जीवन के अन्य व्यवहारों को समझने से भी है। समाज में व्याप्त अनेकों बुराइयां जैसे बाल-विवाह, नशाखोरी, जुआखोरी और दहेज प्रथा समाज को खोखला कर रही हैं। प्रौढ़ शिक्षा के अंतर्गत समाज में व्याप्त बुराइयों से होने वाली हानियों से भी अवगत कराया जाता है, जिससे समाज में चेतना जागृत होती है।

जहां एक ओर ग्रामीण निरक्षरता का प्रतिशत अधिक है वहीं महिला निरक्षरता और भी अधिक है। 1991 के अनुसार महिलाओं की निरक्षरता 60.6 प्रतिशत थी, 40 वर्ष पहले अर्थात् 1951 में महिलाओं की निरक्षरता 91.1 प्रतिशत थी। इस प्रकार 40 वर्षों में लगभग 30 प्रतिशत और महिलाएं साक्षर हो सकीं, जिससे वर्तमान में महिला साक्षरता का प्रतिशत 39.4 हो गया। शिक्षित महिलाएं छोटे परिवार की उपयोगिता व लाभ सही ढंग से समझती हैं एवं इसके प्रति सचेत रहती हैं जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण केरल राज्य है जहां जन्म दर 1.4 प्रतिशत हो गई है। अतः प्रौढ़ शिक्षा के माध्यम से जनसंख्या नियंत्रण भी किया जा सकता है। इसके अलावा महिला शिक्षा पर अधिक ध्यान देने की आंवश्यकता इसलिए भी है, क्योंकि "एक

महिला के शिक्षित होने पर पूरा परिवार शिक्षित हो जाता है'' अर्थात् महिला शिक्षा, विकास प्रक्रिया का केन्द्र है।

प्रौढ़ शिक्षा के अंतर्गत मात्र 15-35 आयु वर्ग को रखा गया है एवं 14 वर्ष से कम आयु वर्ग के लिए अनिवार्य शिक्षा लागू की गयी है। भारतीय संविधान के नीति निर्देशक तत्वों की धारा 45 में यह उल्लेख किया गया है कि 14 वर्ष की आयु तक के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा दी जायेगी, किंतु दुर्भाग्य की बात यह है कि आज भी देश के लगभग 1.91 लाख गांवों में प्राथमिक पाठशाला भी नहीं है, देश के 82 प्रतिशत विद्यालयों में बैठने की व्यवस्था हेतु टाट-पट्टियां भी नहीं है, लगभग 35-40 प्रतिशत स्कूल ऐसे हैं जहां एक ही शिक्षक, एक से लेकर पांच तक की सभी कक्षाएं अकेले पढ़ाता है। ऐसी स्थिति में कहीं हमारे लक्ष्य अधूरे न रह जायें। अतः अनिवार्य शिक्षा लागू करने का उचित लाभ तभी होगा, जब प्राथमिक पाठशालाओं की इन प्राथमिक आवश्यकताओं को पूरा किया जायेगा।

देश के सामाजिक व आर्थिक विकास के लिए शिक्षा अत्यन्त महत्वपूर्ण है। साक्षरता से समाज में व्याप्त रूढ़ियां, अन्धविश्वास व कुरीतियां समाप्त होती हैं और प्रगतिशील समाज की रचना होती है तथा देश आर्थिक दृष्टि से समृद्ध होता है। किसी भी देश के विकास कार्यक्रमों की सफलता हेतु जनता की सक्रिय भागीदारी व सहयोग आवश्यक होता है। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की उपयोगिता तब तक सिद्ध नहीं हो सकती, जब तक कि लोगों में स्वयं निर्णय लेने एवं क्रियान्वयन, नेतृत्व, मूल्यांकन तथा लाभ प्राप्ति में उनकी भागीदारी सुनिश्चित न हो। सम्पूर्ण साक्षरता अभियान को सफल बना कर कार्यक्रमों में प्रत्येक जरूरतमंद की भागीदारी सुनिश्चित करवायी जा सकती है। विकास कार्यक्रम लागू करना जितना आवश्यक है उससे भी अधिक आवश्यक है साक्षरता अभियान के तहत जरूरतमंदों को जागरूक व सचेत करना। साक्षरता द्वारा ही ग्रामीण वर्ग विकास की मुख्य धारा से अपने आप को जोड़ सकता है।

जिस प्रकार अज्ञानता ने ग्रामीणों को विकास कार्यक्रमों को जानने, समझने व लाभान्वित होने से वंचित रखा उसी प्रकार यदि साक्षरता अभियान से जुड़े लोग उसे सिर्फ आंकड़ों का एक ताना बाना मानकर, केवल कागजी कार्यवाही करते हैं, तो ऐसी स्थिति में निरक्षर लोग अपनी उसी अवस्था में रह जायेंगे। अतः आवश्यकता इस बात की है कि साक्षरता को सच्ची निष्ठा से एक सामाजिक एवं नैतिक कर्त्तव्य मानकर देश के निरक्षरों को प्राथमिकता के आधार पर साक्षर व जागरूक किया जाये जिससे अज्ञानता के कूप में डूबे प्रत्येक नागरिक को विकास कार्य में जुड़ने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके और उन्हें विभिन्न ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का उचित लाभ मिल सके।

कुमार टाइपिंग इंस्टीट्यूट,
5, सिविल लाइंस, सागर (म.प्र.)

कविता

माटी के गीत

सत्यदेव संवितेन्द्र

गाते हैं माटी के गीत
खेतों-खलिहानों में
काम करते मेहनतकश लोग
माटी ही जिनकी
पूंजी है सबसे पहली।

माटी की पूजा ही तो
है धरती की पूजा
कुंकुम है माटी खेत की
अक्षत भी वही
मौली का कपास भी
देती है माटी ही,
बंधन है वही तो
युगों-युगों का बंधन
माटी के साथ
जन्मों से बंधे हैं जिससे
खेतों में काम करते
सारे ही मेहनतकश लोग।
जब खेत बनता है
सजा हुआ थाल
उगलती है सोना यह माटी
माटी का बंदन
हमारी है परिपाटी,
हम सब भी गाएं
गुनगुन गुनगुनाएं
इस माटी के गीत
मेहनतकशों के साथ।

कोट का नाम,
सोजत शहर - 306104 (राजस्थान)

पंचायत अध्यक्ष सम्मेलन : एक रिपोर्ट

महात्मा गांधी का सपना साकार हुआ

राजीव पंछी

भारत में पंचायतें लोकतंत्र की जननी रही हैं। यदि देखा जाए तो लगभग दो हजार वर्ष पूर्व पंचायतों का वर्चस्व अपनी चरम सीमा पर था। परंतु धीरे-धीरे इन संस्थाओं के कार्य-कलापों में विसंगतियां आने लगीं और लोकतंत्र की नींव पर बनी पंचायतें वंश धरोहर बनने लगीं। देश में पंचायतों के प्रति विश्वास के पतन का यही मुख्य कारण था।

स्वतंत्रता के बाद हमारी सरकार ने इन्हें पुनः सक्रिय और सशक्त बनाने के निरंतर प्रयास किए हैं। योजना आयोग ने 1957 में बलवंतराय मेहता समिति गठित की जिसकी सिफारिशों के आधार पर तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने 2 अक्तूबर 1959 को पंचायती राज की तीन स्तरीय ढांचे की घोषणा की थी। परंतु वित्तीय शक्तियों के अभाव में यह प्रणाली सार्थक न बन सकी। सन् 1978 में अशोक मेहता समिति ने पंचायतों की आर्थिक स्थिति को सुधारने हेतु कुछ सुझाव दिए जो अंगीकार न हो सके।

लगभग 10 वर्ष बाद तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने एक बार फिर पंचायतों को अस्तित्व में लाने और उन्हें सुदृढ़ बनाने का बीड़ा उठाया परंतु उनके कार्यकाल में भी संविधान संशोधन पारित न किया जा सका। वर्तमान सरकार के सत्ता में आते ही प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिम्ह राव के अथक प्रयासों का ही परिणाम रहा कि 73वां संविधान संशोधन अधिनियम लागू हो गया। देश के सभी राज्यों में पंचायतों के चुनाव हुए और लोकतांत्रिक ढंग से चुनी हुई पंचायतें अस्तित्व में आ गई हैं।

संविधान संशोधन के अनुरूप पंचायतों को अधिकार दिया जाना, उन्हें निश्चित कार्यकलापों की जिम्मेवारी सौंपे जाना और इन कार्यों को पूरा करने के लिए उन्हें पैसा दिया जाना, उन्हें सुदृढ़ और सक्रिय बनाने के लिए नितांत आवश्यक है अन्यथा पिछले तीन वर्ष से किए गए प्रयास भी पिछले प्रयासों की भांति निरर्थक हो जायेंगे। प्रधानमंत्री ने यह जरूरी समझा कि इस संबंध में देश के कोने-कोने से पंचायतों के अध्यक्षों को राजधानी में बुलाया जाए, उनकी कठिनाइयों को सुना जाए, उन्हें उनके कर्त्तव्यों और अधिकारों की जानकारी दी जाए तथा उन्हें वित्तीय शक्तियां सौंपी जाएं।

पिछले दिनों 9 व 10 अक्तूबर, 1995 को राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 125वीं जन्म शताब्दी समारोह के अंग के रूप में देश के पंचायत अध्यक्षों का एक सम्मेलन नई दिल्ली के इंदिरा गांधी स्टेडियम में आयोजित हुआ जिसे राष्ट्रपति डा. शंकर दयाल शर्मा, प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिम्ह राव, ग्रामीण क्षेत्र व रोजगार मंत्री डा. जगन्नाथ मिश्र, कृषि मंत्री डा. बलराम जाखड़, मानव संसाधन विकास मंत्री श्री माधवराव सिंधिया, कल्याण मंत्री श्री सीताराम केसरी, पर्यावरण एवं वन राज्य मंत्री श्री राजेश पायलट, जल संसाधन मंत्री श्री विद्याचरण शुक्ल, ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार राज्य मंत्री श्री उत्तमभाई एच. पटेल, श्री विलास मुत्तेमवार, कर्नल राव राम सिंह एवं प्रसिद्ध समाजसेवी एवं गांधीवादी श्री बी. डी. पांडे आदि नेताओं ने सम्बोधित किया।

सम्मेलन में उपस्थित सभी राज्यों के पंचायत अध्यक्षों का स्वागत करते हुए डा. जगन्नाथ मिश्र ने प्रतिनिधियों से कहा कि आप लोगों को यहां बुलाने का हमारा आशय आपकी कठिनाइयों को सुनना, उनका हल निकालना और आपको अपने कार्यों और अधिकारों तथा वित्तीय शक्तियों के बारे में जानकारी देना है। इसके बाद पांच विषयों पर अलग-अलग ग्रुप बनाए गए। ये पांच विषय थे :

1. पंचायती राज संस्थाएं : अधिकार एवं कार्य
2. योजना के विकेन्द्रीकरण में पंचायतों की भूमिका
3. ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के बारे में सूचना का प्रचार - प्रसार
4. नीति एवं योजना बनाने वालों, प्रशासकों एवं पंचायत प्रतिनिधियों के बीच सहयोगी परिचर्चा
5. सामाजिक संगठन में पंचायतों की भूमिका

पंचायतों के माध्यम से मजबूत भारत के निर्माण का आह्वान

ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्री डा. जगन्नाथ मिश्र ने सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कहा कि पंचायती राज महात्मा गांधी को प्रिय था। हमारे पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय राजीव गांधी ने इस विषय में काफी काम कराया। हमारे

वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरसिम्ह राव जी के नेतृत्व में मजबूत पंचायती राज की स्थापना करने का स्वप्न साकार किया गया है। इसके लिए यह देश उनका सदैव ऋणी रहेगा।

73वें संविधान संशोधन के जरिए जो सबसे महत्वपूर्ण बातें हुई हैं वे हैं पंचायतों में अनुसूचित जातियों और जन-जातियों के लोगों के लिए आरक्षण। इसके अलावा महिलाओं के लिए भी 30 प्रतिशत सीटें आरक्षित की गई हैं। इस प्रकार पंचायतों के काम-काज में वर्तमान केन्द्र सरकार ने पहली बार दलितों और महिलाओं की सम्मानजनक भागीदारी को तय किया है।

केन्द्र सरकार ने गांवों के विकास के लिए विशाल धनराशि तय की है। इस साल यह 7,700 करोड़ रुपये तक पहुंचा दी गई है। आठवीं पंचवर्षीय योजना में इसके लिए विशाल धनराशि यानी 30,000 करोड़ रुपये की व्यवस्था है। इसमें से पंचायती राज की व्यवस्था पर काफी बड़ी राशि खर्च की जायेगी।

डा० मिश्र ने बताया कि अभी हाल ही में तीन नयी योजनाएं शुरू की गई हैं और इन पर अमल का अधिकार भी पंचायतों को दिया गया है। ये योजनाएं हैं : राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम, प्राइमरी स्कूलों के बच्चों के लिए पोषाहार की व्यवस्था और ग्रामीण ग्रुप इंश्योरेंस स्कीम।

राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम की तीन प्रमुख मदें इस प्रकार हैं :-

(क) 65 साल या उसके ऊपर के बेसहारा गरीब लोगों के लिए 75 रुपये प्रति माह की सहायता।

(ख) गरीब परिवार के रोटी कमाने वाले की अचानक स्वाभाविक मौत पर 5,000 रुपये की और दुर्घटना में मृत्यु पर 10,000 रुपये की एकमुश्त सहायता।

(ग) गरीब परिवारों की महिलाओं के लिए दो बच्चों तक तीन-तीन सौ रुपये की प्रसूति सहायता और साथ में प्रसव के बाद के सारे लाभ भी।

इन योजनाओं पर आवेदन लेने, उन पर सिफारिश करने, बच्चों के लिए भोजन तैयार करने आदि का पूरा काम पंचायतें ही करेंगी। बीमा की किस्तें लेने और जमा करने तथा दावों के निपटान कराने का काम भी पंचायतें ही करेंगी। अंततः संसाधनों, सत्ता और अधिकार पर नियंत्रण के साथ-साथ प्रशासनिक उपायों और कोषों से पंचायती राज संस्थायें मजबूत होंगी और लोगों की आवश्यकताओं के प्रति उत्तरदायी बनेंगी।

पंचायतें लोगों का विश्वास जीतें

ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार राज्य मंत्री श्री उत्तमभाई एच. पटेल ने सम्मेलन में उपस्थित पंचायत अध्यक्षों का स्वागत करते हुए कहा कि दो हजार वर्ष से भी अधिक समय से हमारे देश में किसी न किसी रूप में पंचायती राज व्यवस्था विद्यमान रही है। अतीत काल की पंचायती राज व्यवस्था के उदाहरण हमें वाल्मीकि रामायण, महाभारत, कौटिल्य के अर्थशास्त्र में मिले हैं। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने पंचायतों के माध्यम से जनतंत्र के विकेन्द्रीकरण पर सबसे ज्यादा जोर देकर 'ग्राम स्वराज' को सर्वोत्तम माना। अब जबकि आदरणीय प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिम्ह राव जी के अथक प्रयासों के बाद महात्मा गांधी जी का ग्राम स्वराज का सपना साकार हुआ है, महात्मा गांधी की 125वीं जयंती के शुभ-अवसर पर इस समारोह का आयोजन उनको सबसे बड़ी श्रद्धांजलि होगी। आज के शुभ अवसर पर यहां उपस्थित हम सब लोगों का यह परम कर्तव्य हो जाता है कि महात्मा गांधी के 'ग्राम स्वराज' के सपने को देश के कोने-कोने में सही रूप में साकार करने के लिए दृढ़ संकल्प लें और इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए गांव के लोगों को इस अभियान में एक जुम्बिश के रूप में जोड़ें।

श्री पटेल ने कहा कि आदरणीय प्रधानमंत्री ने आठवीं पंचवर्षीय योजना के लिए ग्रामीण विकास हेतु 30,000 करोड़ रुपये की राशि आवंटित की है जो कि पूर्व पंचवर्षीय योजना की तुलना में कहीं अधिक है। यह भी तय किया गया है कि गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बिता रहे लोगों के लाभ के लिए जवाहर रोजगार योजना, इन्दिरा आवास योजना, सुनिश्चित रोजगार योजना, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम आदि के लिए जिलों तथा पंचायतों को सीधे राशि दी जाए। हमने यह भी सुनिश्चित किया है कि गरीबी उन्मूलन के सभी केन्द्रीय प्रायोजित कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में हमारी पंचायतों को महत्वपूर्ण भूमिका सौंपी जाए। श्री पटेल ने कहा कि हाल ही में प्रधानमंत्री ने यह निर्णय लिया है कि गरीबों के लिए शुरू की गई तीन नई योजनाओं अर्थात् राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम, प्राइमरी स्कूलों के बच्चों के लिए पोषाहार कार्यक्रम एवं ग्रामीण क्षेत्रों में सामूहिक जीवन बीमा योजना के कार्यान्वयन में भी पंचायतें महत्वपूर्ण भूमिका निभायेंगी।

राज्य सरकारें पंचायतों को अधिक जिम्मेवारी सौंपे –कर्नल राव राम सिंह

ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार राज्य मंत्री कर्नल राव राम सिंह ने कहा कि पंचायती राज संस्थाओं की भागीदारी से सरकार की विकास योजनाओं को सफल बनाने में सहायता

मिलेगी। राज्य सरकारों को चाहिए कि वे पंचायती राज संस्थाओं को शक्तियां प्रदान करें। गांव में सरकार द्वारा मुहैया करायी जाने वाली सभी सेवाओं जैसे – कृषि, पशुपालन, स्वास्थ्य, शिक्षा का पर्यवेक्षण पंचायत द्वारा ही कराया जाना चाहिए। ग्राम कर्मचारियों को वेतन भी पंचायत द्वारा ही दिया जाना चाहिए । मुझे विश्वास है कि इससे जनता को प्रदान की जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार होगा।

पंचायतें गांव के विकास कार्यों पर पैनी निगाह रखें - मुत्तेमवार

ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार राज्य मंत्री श्री विलास मुत्तेमवार ने कहा "आठवीं योजना में गरीबी उन्मूलन पर विशेष जोर दिया गया है, जिसका उद्देश्य गांव के गरीब लोगों को स्व-रोजगार, मजदूरी रोजगार तथा क्षेत्र विकास कार्यक्रमों के जरिए रोजगार तथा आय के साधन उपलब्ध कराना है। सरकार का यह प्रयत्न है कि इस सदी के अंत तक सबको रोजगार मिले। इस लक्ष्य को पाने के लिए हमने ऐसे कई कार्यक्रम चलाये हैं जो विशेष रूप से समाज के उपेक्षित वर्गों और पिछड़े क्षेत्रों को ध्यान में रखकर तैयार किए गए हैं। अनुसूचित जातियों, जनजातियों, महिलाओं और कमजोर वर्गों के हितों को इन कार्यक्रमों में विशेष संरक्षण दिया गया है।"

"स्व-रोजगार कार्यक्रमों के तहत हमने एक समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम बनाया है जिसका लक्ष्य चयन किए गए ग्रामीण परिवारों की आमदनी को बढ़ाकर गरीबी की रेखा से उन्हें ऊपर उठाने में मदद करना है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए वित्तीय संस्थाओं द्वारा सरकारी सहायता और ऋण के माध्यम से लक्षित समूह को लाभकारी सम्पदा और निवेशों के रूप में मदद दी जायेगी।"

अंत में श्री मुत्तेमवार ने पंचायत प्रतिनिधियों का ध्यान आकर्षित करते हुए कहा कि स्वरोजगार के इन सभी कार्यक्रमों में पंचायतों को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। उन्हें यह सुनिश्चित करना है कि योजनाओं से लाभ पाने वालों की सही-सही पहचान की जाए। पंचायतें यह काम ग्राम सभाओं की खुली बैठकों में करें। वे यह भी सुनिश्चित करें कि ऐसे लोगों को जो कुछ भी दिया जा रहा हो वह अच्छी क्वालिटी का हो। पंचायतों को चाहिए कि वे समय-समय पर और हर स्तर पर कार्यक्रम की प्रगति की समीक्षा करें तथा उनके क्रियान्वयन पर पैनी नजर रखें। ऐसा करके ही वे जमीनी स्तर के विकास को सुनिश्चित कर सकती हैं।

सम्मेलन की सिफारिशें

चुनाव : जहां कहीं पंचायतों का गठन नहीं हुआ है, वहां चुनाव तत्काल कराये जाने चाहिए।

सुपुर्दगी : पंचायतें गठित करने के बाद उन्हें कार्यशील बनाने के लिए पर्याप्त शक्तियां, कार्य और वित्तीय सुपुर्दगी के लिए कदम उठाये जाने चाहिए।

वित्तीय सहायता : केवल विषयों को हस्तांतरित कर देने से पंचायतें तब तक सक्षम नहीं बन सकतीं जब तक कि उन्हें पर्याप्त वित्तीय सहायता न दी जाए। इसलिए राज्य वित्त आयोग की सिफारिशें मिलने तक पंचायती राज संस्थाओं को पर्याप्त धनराशि दिए जाने की तत्काल आवश्यकता है।

साधनों को जुटाना : अपने स्वयं के संसाधन जुटाने के लिए पंचायतों को अधिकार दिए जाने चाहिए और उन्हें गतिशील बनाया जाना चाहिए।

प्रशासन को सुदृढ़ बनाना : पंचायतों को सौंपी गई जिम्मेदारियों और निधियों की अधिक मात्रा में प्राप्ति को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि उन्हें प्रशासनिक और तकनीकी तौर पर सुदृढ़ बनाया जाए। कर्मचारियों के सभी पद भरे होने चाहिए। ग्राम पंचायत अधिकारियों एवं कर्मचारियों का एक अलग संवर्ग बनाया जाना चाहिए।

पंचायतों के चुने प्रतिनिधियों एवं अधिकारियों के बीच सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध : पंचायतों के चुने हुए प्रतिनिधियों एवं अधिकारियों को सौहार्दपूर्ण तरीके से काम करने की स्वस्थ परम्परा का विकास करना चाहिए तथा नई व्यवस्था को प्रभावशाली ढंग से कार्यान्वित करने के लिए एक-दूसरे की भूमिका के सम्मान करने की भावना होनी चाहिए।

प्रशिक्षण एवं जागरूकता सृजन : पंचायतों के नव-निर्वाचित सदस्यों को अपनी भूमिका से पूर्ण परिचित कराने के लिए उन्हें सूचना एवं शिक्षा के माध्यम से अपनी नई जिम्मेदारियों के प्रति सजग बनाया जाना चाहिए। इसके लिए समस्त संचार माध्यमों का प्रयोग किया जाना चाहिए। जागरूकता सृजन की यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहनी चाहिए। इस संबंध में भी सुधार किए जाने की आवश्यकता है कि उन तक सभी सूचना पहुंचे।

स्थायी समितियां : उपयोगी और शीघ्र निर्णय लेने तथा सामाजिक और आर्थिक विकास कार्यक्रमों के कार्यान्वयन हेतु प्रभावी पर्यवेक्षण और निगरानी के लिए पंचायतों को स्थायी समितियां गठित करनी चाहिए। इन समितियों में महिलाओं, अनुसूचित जातियों और जनजातियों को शामिल किया जाना चाहिए।

जिला आयोजन : सामाजिक-आर्थिक आवश्यकताओं और संसाधनों की उपलब्धता को ध्यान में रखते हुए जिले की योजना बनाने के लिए उपयुक्त व्यवस्था की जानी चाहिए।

ग्राम सभा : ग्राम सभा को एक प्रतिनिधि जनतंत्र के मंच के रूप में सुदृढ़ किए जाने की आवश्यकता है। इनकी बैठकें नियमित रूप से होनी चाहिए और उनमे विकास कार्यों से संबंधित विभिन्न विषयों पर विचार होना चाहिए। ग्राम सभा में स्थानीय लोगों की मूलभूत आवश्यकताओं पर चर्चा होनी चाहिए और इसे लोगों की आकांक्षाओं की पूर्ति हेतु कार्य करना चाहिए। ग्राम सभा को गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के लाभार्थियों का चयन करना चाहिए।

पारदर्शिता : पंचायतों को स्वशासी संस्थाओं के कार्यों में लोगों के विश्वास को सुदृढ़ करने में अपनी जिम्मेदारी सुनिश्चित करनी चाहिए।

उपेक्षित समूहों के प्रति सकारात्मक कार्यवाही : पंचायतों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि समाज के कमजोर वर्गों को मुख्य धारा से जोड़ने के लिए विकास कार्यों को तेज किया जाए और उन्हें इस प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भागीदार बनाया जाए। पंचायतों को विशेष रूप से इन वर्गों के प्रति होने वाले सभी प्रकार के शोषण और भेदभाव को समाप्त करने तथा विकास के लाभों का समान वितरण करने के लिए कार्य करना चाहिए।

सामाजिक भागीदारी : पंचायतों को सामाजिक विकास, विशेष रूप से साक्षरता, स्वास्थ्य, महिला एवं बाल कल्याण कार्यक्रम आदि के लिए लोगों को संगठित करना चाहिए।

ग्रामीण विवादों का निपटान : ग्रामीण स्तर के विवादों के समाधान में पंचायतों की भूमिका होनी चाहिए। यदि संभव हो तो ग्राम पंचायतों को न्यायिक शक्तियां दी जाएं। इससे लोगों का मनोबल बढ़ेगा और गांवों पर एक सामाजिक दायित्व भी आयेगा। ग्राम पंचायतों को विगत में चल रही प्रणाली की गहन समीक्षा करने के बाद गांवों में न्याय दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए। इससे पंचायती राज प्रणाली की प्रतिष्ठा बढ़ेगी और गांवों के दैनिक कार्यों में उनका महत्व बढ़ेगा।

भूमि सुधार : पंचायतें भूमि सुधार कार्यक्रम को सफल बनाने और सीमा से अधिक भूमि का उचित वितरण सुनिश्चित करने में प्रभावशाली भूमिका निभा सकती हैं।

जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों का जिला परिषदों के साथ समन्वय: जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों का जिला परिषदों के साथ समन्वय होना चाहिए। जिला परिषदों के अध्यक्ष जिला ग्रामीण विकास एजेंसी के पदेन अध्यक्ष होने चाहिए।

गरीबी उन्मूलन कार्य : ग्राम पंचायत स्तर पर संचालित एवं कार्यान्वित हो रहे सभी गरीबी उन्मूलन कार्य पंचायतों के अधीन होने चाहिए।

लोकतंत्र की रक्षा के लिए पचास लाख सिपाही तैयार

सम्मेलन के महत्व को रेखांकित करते हुए प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिम्हा राव ने कहा यों तो संसद और विधान सभाओं में जनता के प्रतिनिधि एकत्र होते रहते हैं लेकिन सारे देश के प्रतिनिधियों का पंचायती राज अध्यक्षों के सम्मेलन में एक साथ इकट्ठा होना बड़ा ही दुर्लभ अवसर है। इसे नये इतिहास की नींव बताते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि 1947 में देश की आजादी के बाद भारत की कोटि कोटि जनता को सही अर्थों में स्वराज प्राप्त हो रहा है। उन्होंने कहा :

"हमारे सांसद 800 के करीब हैं, दिल्ली में, पार्लियामेंट में और सारे राज्यों की सरकारों में, राज्यों की विधान सभाओं में, विधान परिषदों में। कुल मिलाकर उनकी गिनती बनती है पांच हजार जिनके आधार पर लोकतंत्र इस देश में चल रहा है। ..... आज पंचायती राज के आने के बाद आप हिसाब लगाइये कि कहां पांच हजार, कहां पचास लाख। यानी पांच हजार पर पांच लाख हुए। .... तो सौ गुना हुए..... पचास लाख हुए तो हजार गुना हुए। तो हजार गुना लोग आज तैयार है इस देश में, जिनकी दिलचस्पी लोकतंत्र में बन गयी है। आज पचास लाख लोग तैयार हो जाएंगे, अपना सिर कटवाने के लिए, इस लोकतंत्र को बचाने के लिए।"

लोकतंत्र की दिशा में महत्वपूर्ण शुरुआत

आजादी के बाद देश में पंचायती राज प्रणाली की स्थिति का जिक्र करके हुए श्री नरसिम्हा राव ने कहा कि 1959 में जब यह प्रणाली लागू की गयी तो पंचायत

समितियां आदि बनीं। लेकिन उनका स्वरूप कुछ और था। उनके नियमित चुनाव की कोई व्यवस्था नहीं की गयी। कई राज्यों में तो 17-17 साल तक पंचायतें बिना चुनाव के रहीं। स्वर्गीय राजीव गांधी ने इस कमजोरी को दूर करने के लिए पहल की और पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव नियमित रूप से कराने के लिए संविधान में संशोधन के लिए कदम उठाया। सच्चे अर्थों में लोकतंत्र के विकेन्द्रीकरण की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण शुरुआत थी।

प्रधानमंत्री ने कहा कि विकास कार्यक्रम तभी सफल हो सकते हैं जब लोग उनके बारे में जागरूक हों और उनमें दिलचस्पी लें। गरीबी दूर करने के कार्यक्रमों का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा, "आपके गांवों में जो काम होता है वह आप जिस खूबी से कर सकते हैं, उस खूबी से मैं नहीं कर सकता। आपके गांव में किसी गरीब की रक्षा करनी हो, मदद करनी हो तो यह काम आप बखूबी कर सकते हैं, मैं नहीं।" प्रधानमंत्री ने यह बात स्वीकार की कि गांव में कौन व्यक्ति गरीब, निराश्रित और सहायता का हकदार है, यह बात गांव के लोग बेहतर जानते हैं। इस बारे में सरकार के पास जो सूचनाएं सरकारी रिपोर्टों के रूप में आती हैं, उनमें गलती की गुंजाइश रहती है। हो सकता है किसी नौजवान को गलती से वृद्धावस्था पेंशन मिलने लगे। लेकिन जब इस तरह के कार्यक्रमों की जिम्मेदारी पंचायतों को सौंप दी जाएगी तो ऐसी गलती की कोई संभावना नहीं रहेगी। इस तरह लोगों को पूरा न्याय मिल सकेगा।"

प्रधानमंत्री ने कहा कि अरबों रुपया खर्च करने के बावजूद हम गरीबी दूर करने में पूरी तरह सफल नहीं हो पाए हैं। "इसका कारण यही है कि पैसा कहीं बीच में लीक होता चला जा रहा है। ..... आज हमें मालूम हो गया है कि पंचायती राज एक ऐसा माध्यम है जिसके जरिए हम पैसा सही तरीके से खर्च करा सकते हैं। जो इससे लाभान्वित होने वाले व्यक्ति हैं, गांवों में उन तक पैसा पहुंचाने के लिए हमें एक माध्यम मिला है। ..... पैसा पहुंचाना हमारा काम है। लेकिन जब सही आदमी को सही मदद मिलती है तो वह सफलता आपकी रहेगी और आप ही के जरिए यह काम होगा। यह आपका इम्तहान भी होगा और आपकी सफलता भी होगी।"

प्रधानमंत्री ने कहा कि नयी पंचायत राज प्रणाली के तहत केन्द्र सरकार पंचायतों को धन उपलब्ध करायेगी। ऐसी व्यवस्था की जा रही है जिससे केन्द्र और राज्यों के बीच राजनीतिक मतभेदों के कारण पंचायतों को धनराशि मिलने में कोई अड़चन न आने पाये। उन्होंने इस मामले में दलगत मतभेदों को भुलाकर कार्य करने की आवश्यकता पर भी जोर दिया।

नये पंचायती राज कानून के तहत पंचायतों को जहां अनेक अधिकार सौंपे गये हैं वहीं उनके दायित्व भी बहुत बढ़ गये हैं। गांवों के विकास, सामाजिक सुधार और ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी दूर करने का महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व अब काफी हद तक पंचायतों पर आ गया है। इस कार्य में पूरी आर्थिक सहायता देने का आश्वासन देते हुए प्रधानमंत्री ने पंचायत अध्यक्षों से यह सुनिश्चित करने का आग्रह किया कि केन्द्र द्वारा उपलब्ध करायी जा रही धनराशि सही लोगों तक पहुंचे। उन्होंने कहा कि "पंचायतों के जरिए समाज-सुधार का काम बहुत अच्छे तरीके से कराया जा सकता है। अब यदि कहीं किसी ने कोशिश नहीं की तो मैं समझता हूं कि यह कोशिश की जानी चाहिए।..... हमारे देश में एक ओर विकास हो रहा है, लेकिन विकास केवल सड़क या उद्योग के कार्यक्रम तक नहीं रहा है। विकास बहुत बड़ी चीज है, जिसमें इंसान का दिमाग भी आता है। यह न हो तो देश के विकास का कुछ मतलब नहीं है।"

नयी पंचायत राज प्रणाली को सफल बनाने में केन्द्र की ओर से हर-संभव सहायता का आश्वासन देते हुए प्रधानमंत्री ने पंचायत अध्यक्षों से कहा कि वे पूरी लगन से इस लक्ष्य को प्राप्त करने में जुट जाएं।

जे-3/203, राजौरी गार्डन,
नई दिल्ली-110027

हमारे गांवों के ये बेरोजगार 'कुंवर साहब'

आशारानी व्होरा

राष्ट्रीय स्तर पर एक अनुमान के अनुसार देश में बेरोजगारों की संख्या लगभग चार करोड़ है। विकास-योजनाओं के साथ बेरोजगारी में यह वृद्धि चिंतनीय है। पर क्या उससे भी अधिक चिंतनीय यह स्थिति नहीं है कि इसके बावजूद न तो नई पीढ़ी श्रम के मूल्य को सम्मान देकर स्थापित कर रही है, न उसे इसके लिए घर के व शिक्षण संस्थाओं के स्तर पर तैयार ही किया जा रहा है? एक ओर शहरी क्षेत्र में शिक्षित युवाओं में प्रतियोगिता की अन्धी दौड़ है, दूसरी ओर ग्रामीण क्षेत्र में नवशिक्षित बहुसंख्यक युवाओं को प्रतियोगिता के लिए तैयार ही नहीं किया जा रहा।

यहां यह उल्लेखनीय है कि सर्वेक्षण के दौरान ग्रामीण बेरोजगार संख्या में सप्ताह में एक दिन के काम को भी शामिल कर लिया गया था, फिर भी कुल बेरोजगारों की संख्या का दो-तिहाई हिस्सा ग्रामीण युवकों का है—इस स्थिति की जिम्मेदार क्या शिक्षण संस्थाएं नहीं है, जहां आज भी श्रम की महत्ता स्थापित करने की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा?

उदाहरण के लिए यह एक कहानी पर्याप्त होगी :

गांव का एक नौजवान। पिता ने पेट काटकर पढ़ाया। पास के कस्बाई कालेज में भेजने के लिए उसे खेतीबाड़ी और घर के कामकाज से मुक्त रखा कि बेटा कुछ बने। कुछ बने और घर के अभावों को भरे। अभाव, जो केवल रुपये-पैसे, खाने-पहनने के ही नहीं थे, सामाजिक स्तर या सम्मान के भी थे, चिर संचित कामनाओं की पूर्ति के भी अभाव थे।

ग्रामीण पिता की महत्वाकांक्षा स्वाभाविक थी। ग्रामीण मां की सेवा और त्याग भावना भी अस्वाभाविक न थी। फिर भी कहीं कुछ गलत हो गया। पिता जो अपनी जिन्दगी में नहीं पा सके, बेटे के माध्यम से पाने की आशा संजोए खुद अभावों में जी कर भी बेटे की जरूरतों को तरजीह देता रहे। मां ने स्वयं कष्ट उठाकर, अपने छोटे बेटे-बेटियों को कष्ट में रखकर भी, बड़े बेटे को कष्टों से मुक्त रखा कि 'कुंवर साहब' अफसर बनेंगे तो मां-बाप, भाई-बहन सबके संकट कट जाएंगे। इस धुन में पति-पत्नी दोनों भूल गए कि घर के सुख-दुख, कष्ट-अभाव में साझीदार न बना कर वे अपने व अपने बेटे, दोनों की राह में कांटे बो रहे हैं। श्रमजीवी परिवार के बेटे को श्रम की आदत न डाल, उसे महज स्वप्न-जीवी, परजीवी और गैर जिम्मेदार बना रहे हैं। वास्तविकता और व्यवहारिकता की जमीन नीचे से खिसक जाए और हवा में उड़ने के लिए पंख न हों तो उस परकटे पंछी या त्रिशंकु की आगे क्या दशा होगी?

आज की कुंठा, हताशा, बेरोजगारी का यह भी एक बड़ा कारण है, जिसे इन 'कुंवर जी' के उदाहरण से सहज ही समझा जा सकता है।

कुंवर जी घर-भर की नजरों में चढ़े अपने में समा नहीं रहे थे। कालेज में पढ़ने वाला परिवार का पहला लड़का। सब की आशाओं का केन्द्र, परिवार का बड़ा लड़का। इस मद में उनकी आंखें मुंदी रहीं कि उनके लिए आवश्यक सुख-सुविधाएं जिनकी कीमत पर जुट रही हैं, उनके प्रति भी एक नजर उठाकर देख लें या कभी दो घड़ी बैठकर सोच लें कि उन्हें क्या बनना या करना है? बस खाया-पिया, साइकिल उठाई और कालेज-पढ़ाई के बहाने गांव से कस्बे व कस्बे से समीप के शहर और मटरगश्ती शुरू। घूम-घाम कर गर्दन उठाए घर लौटते और सिर को एक खास अंदाज में झटका दे, अगले दिन साइकिल उठा, फिर चल देते। घर के लोग उनके इस अंदाज पर बलिहार होते रहते।

छोटी कक्षाएं किसी तरह पार कर कुंवर साहब बी. ए. में आकर अटक गए। पर इस बार उन्हें सचमुच ध्यान आया कि पास न हुए तो घर वालों की निराशा तो बढ़ेगी ही, यह भी हो सकता है कि तीसरी बार फेल होने पर उन्हें कालेज छुड़ा, खेतीबाड़ी में ही जोत दिया जाए। सो जी-जान से परीक्षा की तैयारी करने लगे। पर अब भी साल भर मटरगश्ती के बाद अंतिम एक महीने की पढ़ाई से क्या हो सकता था। फिर पास तो होना ही था, नहीं तो.....आगे की बात सोचते ही उनकी रूह कांप उठती। योजना बनी। दोस्त आखिर किस दिन काम आएंगे। नकल द्वारा प्रश्नों के उत्तर लिखने का इंतजाम कर-करा लिया गया। इसमें

सफलता न मिलने पर इस बार वह साम, दाम, दंड, भेद में से कोई भी उपाय आजमाने में नहीं चूकेंगे। अतः कुछ पैसों का भी इंतजाम कर लिया गया, एक छुरे का भी और नकल कराने वाली टीम का भी।

दांव लग गया और कुंवर साहब इस बार गहरे डुबोने वाली परीक्षा की नदी पार कर गए। फिर जिस दिन रिजल्ट आया, उसी दिन अपने दो-तीन दोस्तों को साथ ले, शहर की ओर निकल पड़े कि अब क्या है, अब तो अफसर बन कर ही लौटेंगे। पास के शहर में काम नहीं बना तो बिना टिकट महानगर की ओर प्रस्थान कर गए। टिकट पूछने की किसी की हिम्मत होगी तो वही छुरे वाला नुस्खा आजमा लिया जाएगा। एक बार बड़े नगर में पहुंच भर जाएं, फिर तो सारी समस्याएं चुटकी बजाते हल हो जाएंगी। कहां खेत पर पसीना बहाना और कहां ठंडे कमरे में पंखे के नीचे बैठकर अफसरी करना। अफसरी नहीं, तो बाबूगिरी तो कहीं गई नहीं।

अनुभवहीनता के साथ अधकचरे सपनों की इस उधेड़-बुन में उन्हें यह भी याद न रहा कि क्लर्क की नौकरी के लिए भी 'मार्कशीट' या प्रमाणपत्र तो चाहिए ही। इंटरव्यू के लिए कुछ सामान्य ज्ञान व ढंग की बोल-चाल भी जरूरी हो सकती है।

उनके पास तो ढंग की पोशाक तक न थी। घर वालों से पूछकर, उन्हें बता कर आते तो वे इसके लिए भी कुछ करते ही। पर यहां कुर्सी वाली नौकरी का जो नशा था, उसकी झोंक में इन सब बातों की सोच के लिए गुंजाइश ही कहां थी। महानगरों में एक-एक नौकरी के लिए प्रतियोगियों की संख्या कितनी बड़ी है, यह अंदाज तो बेचारे ग्रामीण कुंवर साहब को कैसे हो सकता था।

कई दफ्तरों और फर्मों का चक्कर काटते-काटते थक गए, पास का पैसा खत्म होने से भूखों मरने की नौबत आई, तो एक टैंपू पर सामान चढ़ाने-उतारने का काम ही कर लिया। खाने-ठहरने भर का जुगाड़ हो गया। पर यह बोझा चढ़ाने-उतारने का काम उनसे बनता न था। फिर इसमें वह अपनी तौहीन भी समझते थे। मेरे एक परिचित सज्जन ने उन्हें मेरे पास भेज दिया, "ग्रेजुएट लड़का है। नया-नया गांव से आया है। इसके रहने-खाने का ठिकाना नहीं, बोझा ढोने का काम इससे बनता नहीं। आपको एक लेखन-सहायक की जरूरत है। इसे अपने पास टिका लीजिए व काम सिखाइए।"

मैंने तीन-चार दिन लगातार 'डिक्टेशन' देकर देखा। कुंवर साहब ने न एक लाइन शुद्ध लिखी, न गलतियों में सुधार लाने की ओर ही विशेष ध्यान दिया। अतः टाइप सिखाने का प्रश्न ही न था। न ऐसे बिठाकर खिला ही सकती थी। पांचवें दिन मैंने अपनी एक परिचित उद्यमी महिला को फोन किया, "एक जरूरतमंद ग्रेजुएट ग्रामीण युवक है। लिखा-पढ़ी के काम में तो शायद ही चले, हो सके तो अपनी फैक्ट्री के किसी काम में लगा लीजिए।" उन बहन ने मेरे ऊपर अहसान कर उन्हें मैटल शीट काटने के काम में लगा लिया। अठारह रुपए दैनिक मजदूरी और 'ओवर टाइम' अलग। जाहिर है कि टिकने के लिए यह पर्याप्त था। पर एक सप्ताह बाद ही 'कुंवर साहब' अपना मैला, फटा- सा थैला उठाए आए और कहने लगे, "बस किराए भर को पैसे हो गए हैं, अब हम घरें ही जाए रहे हैं। वहीं के एक विधायक हमारे परिचित हैं, हमको स्टेशन मास्टरी दिलवाए देंगें। यह मजदूरी के काम हम न करिये।" और कुंवर साहब घर लौट गए। शहर में आकर भी अफसरी क्या, क्लर्की तक न पाने की हताशा उनके चेहरे पर दयनीय रूप से उतर आई थी।

ऐसे अनेक उदाहरण गिनाये जा सकते हैं। बढ़ती बेरोजगारी की वर्तमान गंभीर स्थिति को देखते हुए, क्या इस प्रश्न का उत्तर नहीं खोजा जाना चाहिए? और कुल बेरोजगार संख्या के दो-तिहाई हिस्से की इस समस्या के समाधान को प्राथमिकता नहीं दी जानी चाहिए?

जेड-135, सेक्टर-12,
नोएडा-201301

कुरुक्षेत्र मंगाने का पता :

व्यापार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पटियाला हाऊस
नई दिल्ली-110001

एक प्रति : पांच रुपये **वार्षिक चंदा : 50 रुपये**

बाल श्रम निवारण की चुनौतियां और समाधान

डा० उमेश चन्द्र अग्रवाल*

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही बच्चों को संरक्षण देने, उन्हें राष्ट्रीय निधि के रूप में पल्लवित होने देने और उनके अधिकारों की रक्षा के लिए पर्याप्त अवसर देने के अनेक प्रयास किए गए। सरकार द्वारा देश के 6 से 14 आयु वर्ग के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करना हमारे संविधान की धारा 45 में उल्लिखित है। संविधान में ही नागरिकों के मूलभूत अधिकारों में मुख्यतः धारा 15(3) के द्वारा सरकार को बच्चों के लिए अलग से कानून बनाने का अधिकार है और सरकार ने इस प्रकार के कई कानून बनाये भी हैं। धारा 23 के द्वारा बच्चों के क्रय-विक्रय एवं उनके द्वारा गैर कानूनी तथा अनैतिक कार्य कराने पर रोक है। साथ ही बच्चों को भय दिखाकर या बिना पारिश्रमिक के काम कराना भी प्रतिबन्धित है। इसी प्रकार धारा 24 के द्वारा 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को कारखानों, खदानों तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों में काम पर लगाने पर रोक लगी हुई है। इसके अतिरिक्त संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में धारा 39 के द्वारा बच्चों के स्वास्थ्य और उनके शारीरिक विकास हेतु पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध कराने हेतु सरकार को निर्देश दिये गये हैं। धारा 39 (ई) में सरकार को बच्चों के बचपन की रक्षा करने और यह सुनिश्चित करने के निर्देश हैं कि उन्हें ऐसे कार्यों में न लगाया जाए जो उनकी उम्र और स्वास्थ्य के लिए घातक हों।

कानूनों द्वारा सुरक्षा

बच्चों के लिए संविधान में प्रदत्त अधिकारों के सुनिश्चितीकरण और उनको शोषण से मुक्त कराने हेतु सरकार द्वारा समय-समय पर विभिन्न कानून भी बनाये गये हैं। जैसे 1949 में राजकीय विभागों एवं अन्य क्षेत्रों में श्रमिकों के नियोजन हेतु न्यूनतम आयु 14 वर्ष निर्धारित की गई। कुछ अन्य कानूनों द्वारा भी विभिन्न क्षेत्रों में बाल श्रमिकों को शोषण और पीड़ा से बचाने के लिए उनकी भर्ती हेतु न्यूनतम आयु और सेवा शर्तें निर्धारित की गई हैं। इनमें बागान श्रमिक अधिनियम 1951, व्यापारिक जहाजरानी अधिनियम 1958, मोटर परिवहन अधिनियम 1961, बीड़ी सिगरेट सेवा शर्त नियोजन अधिनियम आदि प्रमुख हैं। 1974 में 'राष्ट्रीय बाल नीति प्रस्ताव' भी पारित किया गया जिसमें बच्चों को पर्याप्त शिक्षा, पोषण और स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाएं उपलब्ध कराने के साथ-साथ शोषण के विरुद्ध उन्हें संरक्षण प्रदान करने हेतु पर्याप्त उपाय करने पर जोर दिया गया। बाल श्रमिकों के सम्बन्ध में विस्तार से अध्ययन करने हेतु 1979 में गठित 'गुरूपदास्वामी समिति' ने भी बाल श्रमिकों की समस्या को गंभीर बताते हुए शीघ्र ही पर्याप्त एवं आवश्यक कदम उठाने हेतु कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिए। इन सुझावों के कार्यान्वयन हेतु प्रयास भी किए गए हैं।

बाल श्रम प्रथा के उन्मूलन हेतु सरकार द्वारा एक महत्वपूर्ण प्रयास एक विस्तृत अधिनियम बनाकर किया गया है जिसे 'बाल श्रम निषेध एवं नियमन, अधिनियम 1986' कहा जाता है। इस अधिनियम के अंतर्गत 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को 18 हानिकारक उद्योगों जैसे कालीन बुनाई, निर्माण कार्य, साबुन निर्माण और पत्थर काटने आदि में कार्य करने पर रोक लगा दी गई है। 1987 में 'राष्ट्रीय बाल-श्रम नीति' की घोषणा और इसके क्रियान्वयन हेतु प्रभावी कदम भी उठाये गये हैं। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के सहयोग से इस हेतु दो परियोजनाएं--आई.पी.ई.सी. अर्थात बाल श्रम की समाप्ति हेतु 'अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रम' और सी.एल.ए.एस.पी. अर्थात 'बाल श्रम कार्य तथा सहयोग कार्यक्रम'—भी प्रारम्भ की गई हैं। सितम्बर 1990 में 'राष्ट्रीय श्रमिक संस्थान' में श्रम मंत्रालय और यूनिसेफ

*संयुक्त निदेशक (प्रशिक्षण) राज्य नियोजन संस्थान, उ० प्र०, कालाकांकर भवन, लखनऊ-7

के सहयोग से बाल श्रमिकों के सम्बन्ध में अध्ययन, शिक्षण और प्रशिक्षण, शोध परियोजनाएं आदि चलाने हेतु बाल श्रमिक कक्ष की स्थापना की गई है। इस कक्ष के प्रमुख उद्देश्य हैं :—

1. भारत में विभिन्न उद्योगों तथा क्षेत्रों में कार्यरत बाल श्रमिकों की स्थिति और दशा के बारे में प्रकाशित तथा अप्रकाशित शोध कार्य का विवरण प्रकाशित करना।
2. बाल श्रमिकों से सम्बन्धित विभिन्न कर्मियों के शिक्षण और प्रशिक्षण के लिए विभिन्न संचार सामग्री जैसे श्रव्य व दृश्य, वीडियो, मुद्रित सामग्री आदि तैयार करना।
3. बाल श्रमिकों से सम्बन्धित मौजूदा कानूनों तथा उनके कार्यान्वयन का पुनरावलोकन करना।
4. कार्यशालाओं, सम्मेलनों, गोष्ठियों द्वारा, जिनमें विशेषज्ञों, कार्यकर्ताओं, योजनाकारों, प्रशासकों और बाल श्रमिकों के क्षेत्र में कार्य कर रही गैर सरकारी समितियों का सहयोग लिया गया हो, लोगों को जागरूक तथा शिक्षित करने में सहायता करना।
5. बाल श्रम पर विभिन्न स्वयंसेवी संगठनों, विश्वविद्यालयी विभागों तथा मंत्रालयों के बीच राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय नेटवर्क विकसित करना।
6. बाल श्रमिकों के क्षेत्र में कार्यरत प्रशासकीय कर्मचारियों और गैर सरकारी संगठनों को प्रशिक्षण प्रदान करना ।
7. अनुसंधान और अल्पावधि फैलोशिप, अनुसंधान परियोजनाओं आदि द्वारा प्रशिक्षण के लिए सुविधाएं प्रदान करना ताकि इस क्षेत्र में अधिक जानकारी प्राप्त की जा सके।

इस कक्ष द्वारा विभिन्न उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों का पता लगाकर चुनी हुई ग्रन्थ सूची प्रकाशित की गई है।

अनेक परियोजनाएं

सड़कों पर घूमकर जीविका कमाने वाले बच्चों के कल्याण हेतु केन्द्र सरकार द्वारा आठवीं पंचवर्षीय योजना में 8 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। इस योजना को देश के 11 बड़े नगरों में लागू किया जा चुका है। गत वर्ष प्रधानमंत्री द्वारा स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर घोषित बाल श्रमिकों की समस्याओं के निराकरण हेतु 850 करोड़ रुपये की पांच वर्षों की व्यापक योजना के अन्तर्गत विभिन्न क्षेत्रों में अनेक महत्वपूर्ण कार्यक्रम लागू किये गये हैं। केन्द्रीय श्रम मंत्री ने इस शताब्दी के अन्त तक देश के 20 लाख बाल श्रमिकों को घातक उद्योगों से हटा लेने का संकल्प व्यक्त किया है और इस सम्बन्ध में कारगर कदम भी उठाये जा रहे हैं। 'राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग' द्वारा भी विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत बाल श्रमिकों की समस्याओं का अध्ययन करके सम्बन्धित राज्य सरकारों के माध्यम से इनकी समस्याओं के निराकरण और बाल श्रम उन्मूलन हेतु विभिन्न प्रभावी कदम उठाने हेतु प्रयास किया जाना प्रशंसनीय कदम है।

केन्द्र सरकार द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की सहायता से राज्य सरकारों, गैर सरकारी संगठनों और श्रम संगठनों के सहयोग से बाल श्रम निवारण हेतु देश में कई परियोजनाएं प्रारम्भ की गई हैं। इन परियोजनाओं का उद्देश्य परियोजना क्षेत्रों से धीरे-धीरे बाल-श्रमिकों को हटाना है और बाल श्रमिकों के परिवारों के लिए प्रौढ़ शिक्षा की व्यवस्था करके सम्बन्धित कानून के उचित क्रियान्वयन पर जोर देना है, साथ ही गरीबी उन्मूलन के कार्यक्रमों पर ध्यान देकर हटाये गये बच्चों के उचित पोषण की व्यवस्था करना है। घातक उद्योगों से बाल श्रमिकों को हटाने की योजना के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु केन्द्र सरकार द्वारा 'राष्ट्रीय बाल श्रम उन्मूलन प्राधिकरण' का गठन भी किया जा रहा है। सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं और प्रयासों के अतिरिक्त इस क्षेत्र में कुछ गैर सरकारी संगठनों, मजदूर संघों और श्रमिक-परिषदों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस समय देश में 100 से अधिक गैर सरकारी संगठन बाल श्रमिकों के लिए कल्याण की योजनाएं चला रहे हैं। यद्यपि इन संगठनों की पहुंच केवल बड़े-बड़े नगरों तक और बाल श्रमिकों की लगभग एक प्रतिशत आबादी तक ही है लेकिन जिस प्रकार अब सरकार की नीति इस प्रकार के संगठनों को भरपूर सहयोग प्रदान करने की है, उससे आशा बंधती है कि शीघ्र ही बाल श्रमिकों के उन्मूलन में इन संगठनों की और भी अधिक महत्वपूर्ण भूमिका हो जाएगी।

उक्त विवरण से स्पष्ट है कि देश को बाल श्रमिकों से मुक्त कराने और इस समस्या के निराकरण हेतु अनेक

प्रावधान, नियम, कानून, योजनाएं और परियोजनाएं परिचालित हैं। सरकारी, गैर सरकारी और अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के सहयोग से अनेकानेक ठोस प्रयास भी किए जा रहे हैं। लेकिन विडम्बना यह है जितने बच्चों को इन प्रयासों के माध्यम से श्रम बाजार से मुक्त कराया जाता है उससे अधिक बच्चे श्रमिक के रूप में बाजार में पहुंच जाते हैं और उनकी संख्या में कमी के स्थान पर बढ़ोत्तरी होती जा रही है। 1971 की जनगणना के अनुसार यह संख्या एक करोड़ 7 लाख और 1981 में एक करोड़ 11 लाख थी। 1986 में राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन द्वारा किए गये सर्वेक्षण के अनुसार यह संख्या 1 करोड़ 73 लाख बताई गई है। वर्तमान में इस संख्या के दो करोड़ तक पहुंचने का अनुमान लगाया गया है। राष्ट्रीय श्रम संस्थान के सौजन्य से किए गये नवीनतम नमूना सर्वेक्षण के अध्ययन से विदित होता है कि महानगरों में बाल श्रम की समस्या और गंभीर है। अकेले दिल्ली में बाल मजदूरों की संख्या चार लाख बताई गई है जिनमें से लगभग एक लाख बच्चे विभिन्न घरों में मजदूर के रूप में कार्य करते हैं। शेष चाय की दुकानों, ढाबों, स्कूटर और कार मरम्मत की दुकानों, भवन निर्माण और कुली गिरी आदि के कार्यों में लगे हुए हैं।

विभिन्न उद्योगों में लगे बाल श्रमिकों की संख्या पर यदि नजर डालें तो पता चलता है कि इनके ऊपर कई उद्योग काफी सीमा तक निर्भर करते हैं। जैसे कालीन उद्योग में मिर्जापुर, भदोही (उ. प्र.), कश्मीर और जयपुर में लगभग ढाई लाख बच्चे कार्यरत हैं। बीड़ी उद्योग में भी ढाई लाख, पीतल और कांच उद्योग में लगभग एक लाख, दियासलाई और आतिशबाजी में 50 हजार, वृक्षारोपण में लगभग 70 हजार, जरी की कढ़ाई में लगभग 45 हजार बच्चे श्रमिकों के रूप में कार्य करते हैं। इनके अतिरिक्त हीरे जवाहरात पर पालिश, चीनी मिट्टी, हस्तशिल्प, हौजरी, हैण्डलूम, लकड़ी की नक्काशी, स्लेट, पत्थर की खुदाई आदि उद्योगों में भी काफी बड़ी संख्या में बाल श्रमिक लगे हुए हैं।

समस्या को सुलझाने में चुनौतियां

देश को बाल श्रमिकों के कलंक से मुक्ति दिलाने हेतु अभी तक किए गये प्रयासों और उनसे मिले परिणामों के अनुभवों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि इस महत्वपूर्ण अभियान के समक्ष अनेक चुनौतियां हैं जिनके विषय में गहन अध्ययन किया जाना चाहिए और उनके निराकरण हेतु व्यावहारिक समाधान खोजे जाने चाहिए। सामान्य तौर पर इस सम्बन्ध में पहली चुनौती इनके बारे में सही आंकड़ों की उपलब्धता की है। श्रमिकों के सम्बन्ध में सरकारी संगठनों, स्वैच्छिक संस्थाओं, औद्योगिक प्रतिष्ठानों अथवा अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सियों आदि द्वारा प्रकाशित आंकड़ों में बहुत कुछ भिन्नता मिलती है। अतः समस्या के निराकरण की योजना बनाने से पूर्व आवश्यक है कि इस सम्बन्ध में सही-सही आंकड़े एकत्र किए जायें। इस कार्य के लिए सरकार को यदि आवश्यक हो तो केवल कुछ प्रतिष्ठित एवं विश्वसनीय स्वयंसेवी संस्थाओं की सहायता लेनी चाहिए तथा इस ओर विशेष ध्यान देकर विभिन्न प्रकार के कार्यों में लगे बाल श्रमिकों की ठीक-ठीक संख्या, उनकी ठीक-ठीक आयु, पारिवारिक स्थिति, शैक्षिक स्तर, कार्य के घंटे, कार्य की दशाएं, वेतन अथवा पारिश्रमिक की दरें आदि की ठीक-ठीक सूचनाएं संकलित की जानी आवश्यक हैं तभी उनके पुनर्वास और कल्याण की योजनाओं को मूर्त रूप दिया जाना सम्भव हो सकेगा।

बाल श्रमिकों की समस्या को सुलझाने में दूसरी प्रमुख चुनौती आर्थिक विपन्नता अथवा बेरोजगारी से सम्बन्धित है। देश में अधिकांश बाल श्रमिक पारिवारिक गरीबी अथवा पारिवारिक बेरोजगारी के शिकार हैं। परिवार के सदस्यों को दो जून की रोटी उपलब्ध कराने के उद्देश्य से अभिभावकों द्वारा उन्हें असमय ही परिवार के बोझ को उठाने के लिए विवश किया जाता है। कुछ परिवार ऐसे भी हैं जिनमें कोई प्रौढ़ सदस्य नहीं है और मजबूरी में उन परिवारों के बच्चों को श्रम बाजार की शरण लेनी पड़ रही है। हालांकि युवकों को रोजगार के अवसर बढ़ाने हेतु, सरकार द्वारा अनेक योजनाएं और सुविधाएं प्रदत्त कराई जा रही हैं लेकिन जनसंख्या के बढ़ते प्रकोप के कारण उनका असर आंशिक तौर पर ही हो पा रहा है। इस समस्या के निराकरण के लिए प्रत्येक परिवार के कम से कम एक प्रौढ़ सदस्य को रोजगार के अवसरों की गारंटी प्रदान करने के अलावा और कोई दूसरा रास्ता नहीं है। इसके लिए सरकार को अधिक प्रभावी योजनाएं बनाकर उनको ठीक से क्रियान्वित करना होगा तथा ऐसे परिवारों को जिनमें कोई प्रौढ़ अथवा रोजगार युक्त सदस्य नहीं है, उनको नियमित आय के साधन जुटाने हेतु आवश्यक कदम उठाने होंगे।

इस समस्या के लिए उत्तरदायी तीसरी प्रमुख चुनौती इन्हें रोजगार देने वालों की लोभी अथवा शोषण की प्रवृत्ति है। ये चाहे ढाबों और चाय की दुकानों के मालिक हों, घरेलू नौकरों के रूप में कार्य कराने वाले सेठ, साहूकार अथवा

अफसर हों अथवा कांच, जरी, कालीन, आतिशबाजी, माचिस आदि उद्योगों को परिचालित करने वाले उद्योगपति हों, सभी का उद्देश्य अधिक से अधिक श्रम कराकर कम से कम पारिश्रमिक भुगतान कर उनका शोषण करने का रहता है। इसके लिए यदि उन्हें कानून की परिधि से बचने लिए झूठे-सच्चे आंकड़े प्रस्तुत करने पड़ें तो उन्हें कोई संकोच नहीं होता है। इस चुनौती का मुकाबला सरकार को अपने निगरानी तंत्र को मजबूत करके तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं आदि की सहायता से दृढ़तापूर्वक करना होगा।

इस क्षेत्र में चौथी प्रमुख चुनौती इस समस्या के समाधान हेतु बनाये गये नियमों और कानूनों के प्रभावी क्रियान्वयन से सम्बन्धित है। यद्यपि बच्चों को श्रमिकों की दुनिया में प्रवेश से रोकने हेतु अथवा उनके शोषण को प्रतिबन्धित करने हेतु सरकार ने अनेक कानूनी प्रावधान किए हैं लेकिन कड़वी सच्चाई यह है कि इन कानूनों और प्रावधानों का न तो कड़ाई से पालन सम्भव हुआ है और न ही इनके प्रभावी क्रियान्वयन हेतु उपयुक्त वातावरण बनाया जा सका है। यद्यपि पिछले कई वर्षों से इस दिशा में सरकार ने कुछ कड़े और प्रभावी कदम भी उठाये हैं और कहीं-कहीं अच्छी सफलता भी अर्जित की है लेकिन उपलब्ध कानूनों में खामियों का लाभ उठाकर अधिकांश दोषी लोगों को दंडित कर पाना सम्भव नहीं हो पा रहा है। इस चुनौती का सामना करने हेतु सरकार के लिए यह आवश्यक हो गया है कि सम्बन्धित अधिनियम में संशोधन कर 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को किसी भी उद्योग अथवा प्रक्रिया में रोजगार देने पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाये और बाल श्रम शोषण को गैर जमानती अपराध घोषित कर कड़ी-से-कड़ी सजा की व्यवस्था करे। इसके साथ-साथ कानूनी प्रावधानों को इतना सशक्त और प्रभावी बनाया जाये जिससे कि अपराधी को बच निकल जाने हेतु कोई रास्ता नहीं मिल सके।

बाल श्रम निवारण के क्षेत्र में पांचवीं प्रमुख चुनौती इन्हें श्रम क्षेत्र से हटाकर इनके पुनर्वास अथवा शिक्षा की व्यवस्था से सम्बन्धित है। कानूनी प्रावधानों का दृढ़तापूर्वक उपयोग कर इन्हें इनके कार्यक्षेत्र से हटा कर इनके उचित पुनर्वास एवं शिक्षा की समुचित व्यवस्था तुरन्त उपलब्ध कराना आवश्यक होगा। साथ ही साथ अब आवश्यक हो गया है कि 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को निश्चित रूप से संविधान में शामिल निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जाये। यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से विद्यालय जाने वाले इस आयु वर्ग के बच्चों की संख्या 2 करोड़ से बढ़कर 15 करोड़ से भी अधिक हो गई है लेकिन अभी तक लगभग 1.5 करोड़ बच्चे विद्यालयों में नहीं जा पाते हैं। इन बच्चों के माता-पिता को प्रौढ़ शिक्षा के माध्यम से जागरूक और उत्तरदायित्वपूर्ण बनाया जाना भी आवश्यक है। पर्याप्त प्रचार द्वारा जन भावनाओं को प्रेरित कर जनमानस को इस बुराई के प्रति संवेदनशील बनाया जा सकता है। कानूनों के प्रभावी क्रियान्वयन के साथ-साथ जन सहयोग और जन चेतना द्वारा भी इस बुराई को समाप्त करने में सहायता प्राप्त की जा सकती है। बाल अधिकारों के समर्थक अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की अभी हाल ही में बाल श्रमिकों के हाथों से बने सामान की सम्पूर्ण विश्व में बहिष्कार की धमकी जैसे ठोस कदम भी अपने देश के नागरिकों द्वारा उठाये जा सकते हैं।

उक्त वर्णित सभी प्रयासों से निश्चित ही हमारा समाज बाल श्रमिकों से मुक्त हो सकेगा और देश के सभी बच्चों को उनके अधिकार प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होगा। पिछले 5-6 वर्षों से विशेष रूप से इस मुद्दे की ओर अंतर्राष्ट्रीय झुकाव, देश के राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री द्वारा इस मसले पर दिए गए वक्तव्य और योजनाओं की घोषणा, संसद और कुछ राज्यों के विधान मंडलों में इस मामले में छिड़ी बहस और उठाये गये ठोस कदम, सन् 2000 तक सभी को शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं को उपलब्ध कराने हेतु सरकार का दृढ़ निश्चय, गैर सरकारी संगठनों और श्रमिक संघों की भागीदारी और जन संचार माध्यमों द्वारा जन चेतना के प्रयासों से जो अनुकूल वातावरण बना है; उससे विश्वास हुआ है कि निश्चित ही अब इस दिशा में आशातीत सफलता प्राप्त होगी और लाखों-करोड़ों बच्चों को अपने अधिकारों को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त हो सकेगी।

लेखकों से

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक कहानी, कविता, संस्मरण, लघुकथा आदि भेजिये। रचनाएं दो प्रतियों में टाइप की हुई हों और उनके साथ मौलिकता का प्रमाण पत्र संलग्न हो अन्यथा उन्हें स्वीकार नहीं किया जाएगा। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा अपना पता लिखा लिफाफा लगाना न भूलें। सभी रचनाएं संपादक, 'कुरुक्षेत्र', 655, 'ए' 'विंग निर्माण भवन नई दिल्ली-110011 के पते पर भेजें। **—सम्पादक**

सहकारी आन्दोलन एवं हमारे किसान

✍प्रो. उमरावमल शाह

भारत मूलतः कृषि प्रधान देश है और उसकी लगभग 75 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है, जिसमें से लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या सीधे कृषि से जुड़ी हुई है। अतः सीधी-सी बात है कि हमारे देश की सम्पन्नता कृषि, कृषक एवं गांवों के विकास से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई है। दूसरे शब्दों में कृषि भारतीय ग्राम्य अर्थव्यवस्था का आधार है।

कृषि की स्थिति

यदि हम कृषि को कृषक की दृष्टि से देखें तो पायेंगे कि 76 प्रतिशत कृषि जोतों का सम्बन्ध लघु एवं सीमान्त कृषकों से है और लगभग 59 प्रतिशत काश्तरत कृषि जोतें 2.5 एकड़ से कम हैं। सिंचाई की पर्याप्त सुविधाओं के अभाव में अधिकांश कृषक अपनी खेती के लिये मानसून पर आश्रित हैं। अथक प्रयासों एवं पूंजीनिवेश के फलस्वरूप लगभग 30 प्रतिशत रकबा ही सिंचाई सुविधाओं के अन्तर्गत आ पाया है। आम भारतीय किसान परम्परागत कृषक है एवं अनार्थिक कृषि जोतों से जुड़ा हुआ है। गरीब एवं साधनहीन होने से वह कृषि को व्यवसाय के रूप में विकसित नहीं कर पा रहा है। अन्य रोजगार के अभाव में कृषक एवं उसका परिवार कृषि पर ही आश्रित बन कर रह जाता है। बढ़ती जनसंख्या का भार भी कृषि जोत पर ही पड़ता है और सीमित भूमि के कारण परिवार सतत गरीबी के कुचक्र में रहता है। अतः कृषि क्षमता बढ़ाना ही हमारे विकास का आधार होना चाहिये। इसी दिशा में सहकारी आन्दोलन किसानों के आर्थिक विकास के लिये सतत कार्यरत है।

सहकारिता की सार्थकता

हमारे देश में अभी तक किसानों के लिए किए गए आर्थिक विकास के कार्यक्रमों से यह तथ्य उभर कर आया है कि किसानों के विकास के लिए संस्थागत प्रयासों की नितान्त आवश्यकता है तथा इसमें आपसी सहयोग और उनकी भागीदारी भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। किसानों को यह आभास कराने से कि वे अपना विकास अपने प्रयासों के द्वारा कर सकते हैं, सहकारिता की प्रक्रिया की भूमिका सिद्ध होती है।

सहकारिता के माध्यम से कृषकों के लिये आर्थिक कार्यकलाप

सहकारी आंदोलन ने किसानों के आर्थिक विकास में जो योगदान दिया है, उसको मुख्य रूप से चार कार्यक्रमों में देखा जा सकता है। ये कार्यक्रम हैं :

(1) किसानों के कृषि उत्पादन के विकास के लिए सहकारी साख की व्यवस्था,

(2) कृषि उपज की सहकारी विपणन व्यवस्था,

(3) कृषि उपज आधारित प्रसंस्करण इकाइयों की सहकारी क्षेत्र में स्थापना कर कृषि जिन्सों का अधिक मूल्य उपलब्ध कराया जाना और

(4) कृषकों को संगठित कर सहकारिता के माध्यम से दुग्ध उत्पादन कार्यक्रम से रोजगार एवं आय में वृद्धि करना।

किसानों के लिए सहकारी साख की व्यवस्था

किसानों को कृषि उत्पादन हेतु आवश्यकतानुसार सहकारी संस्थागत ढांचे से ग्राम स्तर पर प्राथमिक सहकारी साख समितियों के माध्यम से अल्पावधि एवं मध्यावधि ऋण नकद के रूप में तथा खाद, बीज एवं कीटनाशक के रूप में प्रदान किया जा रहा है। किसानों की सुविधा को देखते हुए ऋण की वसूली फसल बेचने के उपरान्त की जाती है। यह खरीफ और रबी फसल के लिए दिया जाने वाला अल्पावधि फसली ऋण किसानों को उपज बढ़ाने तथा कृषि में नई प्रणाली अपनाने में बहुत सहायक हुआ है इसी प्रकार मध्यमकालीन ऋण जो सामान्यतः 3 से 5 वर्ष की अवधि का होता है, मुख्यतया सिंचाई सुविधाएं विकसित करने में सहायक हुआ है।

इन ऋणों के अतिरिक्त सहकारी भूमि विकास बैंकों के माध्यम से कृषकों को लम्बी अवधि के ऋण (5 से 15 वर्ष तक की अवधि के लिये) उपलब्ध कराये जाते हैं। यह ऋण मुख्यतया लघु सिंचाई जैसे नलकूप, छिड़काव यंत्र, डीजल इंजिन, बिजली की मोटर आदि के लिये दिये जा रहे हैं। लेकिन इसके साथ-साथ किसानों को बागवानी विकास,

शुष्क भूमि को कृषि योग्य बनाने हेतु, सबमर्सिबल पम्प लगाने, कुओं को गहरा करने, फव्वारा सिंचाई योजना विकसित करने, भाड़े के वाहनों तथा ग्रामीण इलाकों में मकान बनाने के लिये भी दीर्घावधि ऋण दिये जा रहे हैं। इस दिशा में और प्रगति हुई है और अब यह ऋण कृषि से सम्बन्धित अन्य रोजगारमूलक काम-धन्धों तथा छोटे एवं कुटीर उद्योग स्थापित करने के लिये भी ऋण राशि से खरीदे गये सामान को बंधक रखकर दिया जा सकता है। डेयरी, मुर्गीपालन, भेड़पालन आदि कार्यों के लिए भी ऋण उपलब्ध कराये जा रहे हैं जिससे विशेषतया खेतिहर मजदूर लाभान्वित हो रहे हैं।

कृषि कार्यों के लिये शोषणमुक्त, उत्पादनमूलक कृषि सहकारी साख व्यवस्था को कार्य रूप देने हेतु कृषकों के संस्थागत प्रयास के रूप में देश में लगभग 95,200 प्राथमिक कृषि सहकारी साख समितियां ग्राम स्तर पर कार्यरत हैं जिनकी सदस्यता लगभग 8 करोड़ 80 लाख कृषकों की है। इन समितियों के कार्यक्षेत्र में देश के शत प्रतिशत गांव आ चुके हैं तथा 65 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या इनसे लाभ उठा सकती है। इनके द्वारा वार्षिक अल्पावधि एवं मध्यमावधि ऋण राशि 5,493 करोड़ रुपये तक पहुंच गई है तथा दीर्घावधि ऋण राशि 1,100 करोड़ रुपये को पार कर गई है।

कृषि उपज की सहकारी विपणन व्यवस्था

किसानों को उनकी उपज का लाभकारी मूल्य दिलाने हेतु तथा व्यापारियों एवं बिचौलियों के चंगुल से राहत दिलाने हेतु मण्डी स्तर पर प्राथमिक सहकारी विपणन समितियां/क्रय-विक्रय सहकारी समितियां स्थापित की गई हैं। देश में ऐसी लगभग 6,000 समितियां कार्यरत हैं। इन समितियों द्वारा कृषि उपज की व्यावसायिक एवं समर्थन मूल्य पर खरीद की जाती है तथा कृषकों को कृषि उपज पर रहन ऋण देने की भी व्यवस्था उपलब्ध कराई जाती है। इससे किसान बाजार से अच्छे मूल्य आने पर कृषि उपज को बेचने की सुविधा पा जाता है। इन समितियों द्वारा समय पर रासायनिक खाद, उन्नत बीज, कीटनाशक दवाइयां, कृषि उपकरण आदि भी कृषकों को उपलब्ध कराये जाते हैं। इन विपणन समितियों का कार्य सतत प्रगति पर है तथा इनका कारोबार 8,000 करोड़ रुपये वार्षिक तक पहुंच गया है।

सहकारी प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना

कृषि उपज को संवार कर उसका लाभकारी मूल्य दिलाने के उद्देश्य से सहकारी क्षेत्र में गन्ना, कपास, तिलहन, धान आदि उपज पर आधारित सहकारी प्रसंस्करण इकाइयां/सहकारी कारखाने स्थापित किये गये हैं। इन कारखानों ने किसानों को ग्रामीण क्षेत्र में नये रोजगार के साधन उपलब्ध कराकर उनकी आय में वृद्धि की है। 'क्षेत्र विकास' में भी इन सहकारी प्रक्रिया इकाइयों ने एक सीमित एवं एकांगी विकास कार्यक्रम से ऊपर उठकर कृषकों के बहुमुखी एवं सर्वांगीण विकास को आगे बढ़ाया है। वर्तमान में इन महत्वपूर्ण सहकारी कारखानों में 299 सहकारी शक्कर कारखाने, 123 सहकारी सूत गिरणियां, 56 सहकारी तेल मिलें, 293 सहकारी चावल मिलें, 40 फल एवं सब्जी प्रसंस्करण उपक्रम सीधे कृषकों द्वारा संचालित किये जा रहे हैं। शक्कर एवं सूत के उत्पादन में इन प्रसंस्करण इकाइयों का योगदान विशिष्ट समझा जाता है। देश का 62 प्रतिशत चीनी उत्पादन एवं 16.4 प्रतिशत सूत उत्पादन इन सहकारी इकाइयों द्वारा किया जा रहा है।

सहकारिता के आधार पर डेयरी उद्योग का विकास

पशुधन पर आधारित उद्योगों में दुग्ध उद्योग का प्रमुख स्थान है। मार्च 1994 तक 23 राज्यों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों में आनन्द पद्धति के आधार पर 67,317 दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों का गठन किया जा चुका था जिनके 68 लाख किसान, मुख्यतया छोटे किसान, सदस्य हैं। इन समितियों द्वारा दुग्ध उत्पादन 61 लाख मैट्रिक टन तक पहुंच गया है। किसानों की इन डेयरी समितियों को श्वेत क्रान्ति का जनक कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस सहकारी प्रयास से ग्रामीण क्षेत्रों में श्वेत क्रान्ति के साथ-साथ छोटे किसानों की आय में वृद्धि हुई है और अंशकालिक रोजगार के अवसर पैदा हुए हैं। कृषक महिलाओं ने भी इन सहकारी संगठनों को स्थायित्व प्रदान कर प्रभावी बनाया है।

सहकारिता का प्रभाव

आज देश में सहकारिता आन्दोलन ने 'हरित क्रान्ति' से लेकर 'श्वेत क्रान्ति' को सफल बनाने में जो योगदान दिया है एवं उपलब्धियां अर्जित की हैं, उससे भारतीय किसान एवं ग्रामीण समुदाय में आशा की नई किरण का संचार हुआ है। सहकारी आन्दोलन ने भारत के करोड़ों किसानों को आश्वस्त किया है कि वे सामूहिक प्रयासों से

न केवल अभावों से उभर सकते हैं और अपनी कमजोर आर्थिक स्थिति को मजबूत बना सकते हैं, बल्कि कृषि में आधुनिक तकनीक का अधिक से अधिक प्रयोग कर उत्पादकता में वृद्धि कर सकते हैं। यही कारण है कि आज भारत में सहकारी आन्दोलन लगभग चार लाख सहकारी संस्थाओं एवं 17 करोड़ से भी अधिक सदस्यता के ताने-बाने के साथ विश्व के सर्वाधिक व्यापक आंदोलन के रूप में विकसित हुआ है।

कुछ अपेक्षाएं

किसानों के लिये सहकारी प्रयासों से मिलने वाले लाभ तभी फलीभूत होंगे जब वे यह समझेंगे कि जिस सहकारी समिति के वे सदस्य हैं, वह उनकी खुद की संस्था है और उन्हें संस्था के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सक्रिय भूमिका निभानी है। इस दिशा में आवश्यक है कि :

(1) ऋणी सदस्य अपने बकाया ऋणों को समय पर चुकाने की प्रवृत्ति विकसित करें। समय पर ऋण अदायगी से गांव की प्राथमिक कृषि सहकारी साख समिति अपने समस्त कृषक सदस्यों को बिना अवरोध के साख उपलब्ध कराने में समर्थ रहेगी। सदस्यों को यह याद रखना चाहिये कि साख वितरण और ऋणों की वसूली एक सतत कार्य विधि है। इसमें अवरोध आता है तो ऋण वितरण की पूरी प्रक्रिया तिरमिरा जाती है।

(2) यद्यपि गांव में किसान खाद, बीज और कर्ज तो सहकारी संस्थाओं से प्राप्त कर लेते हैं और कृषि में उन्नति भी कर लेते हैं, लेकिन अभी भी कृषक अपनी कृषि उपज का 90 प्रतिशत हिस्सा बिचौलियों और आढ़तियों के माध्यम से बेच देते हैं। इससे किसानों को उनकी उपज का सही मूल्य नहीं मिल पाता है और वे शोषण के शिकार बने रहते हैं। इसलिये यह आवश्यक है कि किसान अपनी उपज के विपणन में भी सहकारिता के माध्यम को अपनाएं। मण्डी स्तर पर कृषि उपज क्रय-विक्रय सहकारी समितियां/मार्केटिंग को-आपरेटिवज़ इसी आशय से स्थापित की गई है कि कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य मिल सकें। यह समितियां कृषकों की ही सदस्यता से बनती है और उनके द्वारा ही संचालित होती है।

(3) केवल कृषि उत्पादन वृद्धि को कृषकों का विकास मान लेना अर्द्ध सत्य को स्वीकारना होगा। अब यह अनुभव किया जा रहा है कि ग्रामीण औद्योगीकरण में कृषि उपज आधारित उद्योगों को ग्रामीण अंचलों में विकसित किया जाए और सहकारी प्रसंस्करण इकाइयों से कृषक एवं उनकी सहकारी समितियों को व्यापक रूप से जोड़ा जाये। इस प्रकार के उपक्रमों के सहकारी क्षेत्र में गठन की असीम संभावनाएं हैं इनके विकास से कृषकों की आय में अत्यधिक वृद्धि होगी। और उन्हें यह आभास होगा कि केवल कच्चे माल के ही उत्पादक रहने से उनका आर्थिक विकास नहीं हो सकता।

शाह निवास, धानमंडी रोड,
उदयपुर-313001

(पृष्ठ 2 का शेष)

पाठकों के विचार...

'कुरुक्षेत्र' का जुलाई अंक पढ़ने को मिला। आर.के. टण्डन जी की आवरण सज्जा पर दृष्टि विराम किये बिना 'इस अंक में' व अन्दर के लेखों पर सरसरी निगाह डालना कठिन ही नहीं असम्भव है। जुलाई के इस अंक में 'ग्रामीण विकास और पशुपालन' जैसे बहुत ही सामयिक विषयों पर सारगर्भित व अप्राप्य जानकारी हासिल हुई। आशारानी व्होरा कृत लेख "मातृत्व सबसे बड़ी शक्ति व सबसे बड़ी कमजोरी" में सामाजिक परिवेश में घटते मूल्य व वैचारिक सोच बदलाव की जो चिन्ता जतायी है उसे नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। अपितु वर्तमान में परिपोषित भारतीय संस्कृति में जो अतिक्रमण हो रहा है उसे दूर करना हमारी ही जिम्मेदारी है वरना उत्तरदायित्व विहीन मानव जिन मूल्यों को समाज में स्थापित करेगा शब्दों में कहना कठिन होगा और इसके दुष्परिणामों से बचना असम्भव होगा।

अन्य सभी लेख बेहद सराहनीय व महत्वपूर्ण जानकारी से ओत-प्रोत हैं।

जगत सिंह गौतम,
142, तुलाराम बाग,
पो. दारागंज इलाहाबाद,
पिन-211006

ग्रामीण विकास में कृषि आधारित उद्योगों का महत्व

डा० सूरज सिंह
एवं
परम पावन उपाध्याय

भारत जैसे विकासशील देश में कृषि को अर्थव्यवस्था की आत्मा माना जाता है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कृषि के महत्व को स्पष्ट करते हुए लिखा है, "जीवन कृषि पर निर्भर करता है जहां कृषि लाभदायक नहीं है वहां स्वयं जीवन भी लाभदायक नहीं हो सकता।" इसी प्रकार के विचार पंडित जवाहरलाल नेहरू के भी हैं, "कृषि को सर्वाधिक प्रमुखता देने की जरूरत है, कृषि असफल रहती है तो सरकार और राष्ट्र दोनों असफल रहते हैं।" कृषि अर्थव्यवस्था के समस्त क्षेत्रों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। देश का सबसे बड़ा उद्योग होने के कारण कृषि देश की 70 प्रतिशत से भी अधिक जनसंख्या की आजीविका का स्रोत है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का योगदान निम्न दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है :–

- राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान लगभग 39.9 प्रतिशत है जो इंग्लैण्ड के दो प्रतिशत, कनाडा के चार प्रतिशत व अमरीका के तीन प्रतिशत की तुलना में कई गुना अधिक है।
- देश में संचालित विभिन्न उद्योगों को कच्चे माल की प्राप्ति कृषि से ही होती है।
- निर्यात व्यापार में कृषि और उससे सम्बद्ध वस्तुओं का कुल भाग 70 प्रतिशत है।
- खाद्यान्न आपूर्ति में कृषि का विशेष महत्व है। देश में कुल उपज का लगभग 80 प्रतिशत खाद्यान्न है।

कृषि क्षेत्र की समस्याएं

कृषि के महत्व को देखते हुए सरकार ने नियोजन काल में इस क्षेत्र को सदैव प्रधानता दी। प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों पर कुल परिव्यय जहां 290 करोड़ रुपये था वह सातवीं योजनावधि में 19,430 करोड़ रुपये हो गया एवं आठवीं योजना के लिए 22,462 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया है। इसी प्रकार सरकार द्वारा समय-समय पर कृषि क्षेत्र को विभिन्न सुविधाएं उपलब्ध कराई गईं। यद्यपि इन सम्मिलित प्रयासों का परिणाम फलदायी रहा है किन्तु आज भी कृषि क्षेत्र के समक्ष कई चुनौतियां मुंह बाये खड़ी हैं। साथ ही कृषक समुदाय की माली हालत बहुत अच्छी नहीं कही जा सकती। भारत में कृषि क्षेत्र की प्रमुख समस्याएं इस प्रकार हैं:–

- कृषि उत्पादकता का निम्न स्तर,
- कृषि क्षेत्र में लोगों की अधिक संख्या का लगा होना लेकिन उत्पादकता कम होना और
- कृषि क्षेत्र में परोक्ष बेरोजगारी की बहुलता।

कृषि आधारित उद्योगों का दर्शन

बीसवीं सदी की एक प्रमुख विशेषता रही है औद्योगिक क्रान्ति का अभ्युदय। इस अवधि में आर्थिक चिंतकों एवं विश्लेषकों ने इस बात पर जोर दिया कि देश को विकास के उच्चतम शिखर पर पहुंचाने के लिए तीव्र गति से औद्योगीकरण पहली शर्त है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में कृषि विकास के साथ-साथ औद्योगिक क्षेत्र के विकास पर भी ध्यान केन्द्रित किया गया। महालनोबिस माडल से इसे और भी अधिक बल मिला। किन्तु भारत पूर्णतः औद्योगीकृत राष्ट्र नहीं बन सका। आज भारत में कृषि और औद्योगीकरण के बीच की स्थिति बनी हुई है।

अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के साथ ही ग्रामीण विकास प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है। भारत में अभी भी ग्रामीण विकास की गति बहुत धीमी है। इस धीमी गति के कई कारण रहे हैं। इसमें तेजी लाने के लिए केन्द्र तथा विभिन्न राज्य सरकारों ने आर्थिक उदारीकरण का मार्ग अपनाया है। इसके अन्तर्गत पूंजी निवेश के प्रस्ताव देशी व विदेशी निवेशकों से मांगे गये हैं। ग्रामीण विकास में आई रुकावट का प्रमुख कारण है आधारभूत संसाधनों का पूर्णतः विकसित न हो पाना। अतः इन क्षेत्रों में विद्युत, जल, परिवहन, संचार आदि आधारभूत सुविधाओं के विकास को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इन सबक अतिरिक्त वर्तमान औद्योगीकरण के इस युग में ग्रामीण

विकास में कृषि आधारित उद्योगों का अपना विशिष्ट महत्व है। इन उद्योगों में जहां कम पूंजी की आवश्यकता होती है वहीं इनका संचालन कुशलतापूर्वक किया जा सकता है।

कृषि आधारित प्रमुख उद्योग

यद्यपि विभिन्न उद्योगों का आधार कृषि ही रही है, अधिकांश उद्योगों को संचालित करने हेतु कच्चे माल की प्राप्ति कृषि से ही संभव हो पाती है। कृषि आधारित प्रमुख उद्योग निम्नलिखित हैं:

वनस्पति घी, तेल उद्योग : इस उद्योग में सूरजमुखी, मूंगफली, रैपसीड व तिलहन आदि का प्रयोग कर वनस्पति घी या रिफाइन्ड खाद्य तेल प्राप्त किया जा सकता है।

चीनी, गुड़ एवं खाण्डसारी उद्योग : यह उद्योग उन क्षेत्रों में स्थापित किया जा सकता है जहां पर्याप्त मात्रा में गन्ना उपलब्ध हो। इसी प्रकार चीनी उत्पादन में प्रयुक्त कच्चे माल के अवशेषों से बीयर का निर्माण भी किया जा सकता है।

फ्रोजन फल और सब्जी उद्योग : यह उद्योग पाश्चात्य देशों में अत्यंत लोकप्रिय है। डिब्बा बन्द उद्योग का प्रयोग अभी तक आमिष खाद्य पदार्थों के संरक्षण में ही होता आया है किन्तु अब इसका उपयोग शाकाहारी वस्तुओं के संरक्षण में भी होने लगा है। इस उद्योग के माध्यम से फलों तथा अन्य खाद्य-पदार्थों को अत्यन्त न्यून तापक्रम पर डिब्बों में सील कर दिया जाता है। डिब्बे में हवा का प्रवेश न हो सकने के कारण इसमें वस्तुएं अधिक समय तक संरक्षित रह सकती हैं।

खाद्य पदार्थ उद्योग : इन उद्योगों में बेकरी, सूजी, मैदा, आटा, दाल, अचार आदि उद्योग आते हैं।

कृषि आधारित उद्योग एवं ग्रामीण विकास : कृषि आधारित उद्योगों के साथ ग्रामीण विकास का प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। भारत जैसे देश में जहां की अधिकांश जनता आज भी गांवों में निवास कर कृषि पर पूर्णतः आश्रित है और गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने को मजबूर है, दूसरी ओर जिस देश की प्रमुख समस्याओं में से एक बढ़ती हुई बेरोजगारी है, ऐसे में कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना कर विभिन्न समस्याओं से निजात पाई जा सकती है। ग्रामीण विकास में इन उद्योगों का योगदान निम्न बिंदुआ से परिलक्षित होता है :

- कृषि आधारित उद्योगों की, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापना से, गांवों में आधारभूत सुविधाओं का विकास होगा जैसे गांवों में सड़कों के निर्माण, संचार तंत्र में सुधार, पेयजल की उपलब्धता और चिकित्सा सुविधाओं के विस्तार को प्रोत्साहन मिलेगा।
- गांवों में रोजगार की संभावनायें बढ़ेंगी। इन उद्योगों में स्थानीय लोगों को ही रोजगार में लगाये जाने से जहां एक ओर गांवों से पलायन पर रोक लगेगी जिससे शहरों में अधिक जनसंख्या की समस्या पर नियंत्रण पाया जा सकेगा।
- ग्रामीण और शहरी अर्थव्यवस्था में व्याप्त असंतुलन में कमी आयेगी।
- गांवों में औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप सामाजिक और आर्थिक विकास संभव होगा। ग्रामीण जनता का जीवन स्तर सुधरेगा। गांवों का पिछड़ापन दूर होने के साथ-साथ वहां व्याप्त कुरीतियों और अंधविश्वासों का अन्त होगा।
- ग्रामीण क्षेत्रों में औद्योगीकरण से कृषि विकास में भी सहायता मिलेगी। कृषि की नयी तकनीकों और उन्नत बीजों के बारे में जानकारी मिलेगी और अधिक पैदावार को प्रोत्साहन मिलेगा।
- कृषक को खाली समय में काम मिलने पर मानवीय शक्ति का सही सदुपयोग हो सकेगा जिससे राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी।

उपर्युक्त विवेचन से इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि भारत जैसे ग्राम प्रधान देश में आज कृषि आधारित उद्योग सर्वाधिक उपयोगी है। देश की बढ़ती हुई विशाल जनसंख्या और उसकी बढ़ती हुई मांगों की पूर्ति के लिए आवश्यक है कि छोटे-छोटे उद्योग स्थापित किये जाएं। इस दृष्टि से कृषि आधारित उद्योगों का कोई दूसरा विकल्प नहीं है। यह बात गौरतलब है कि इन उद्योगों की अपनी कुछ सीमायें हैं किन्तु इसका यह आशय नहीं है कि इनकी स्थापना ही न की जाए, आवश्यकता इस बात की है कि इनकी खामियों का पता लगाकर उन्हें दूर करने के प्रयास किये जाने चाहिए।

8 बी, 9 प्रताप नगर,
टोंक फाटक, जयपुर,
(राज.) 302015

कहानी

फ़र्क

✍ मंगू

मि. घोष के परिवार में पत्नी के अलावा चार बच्चे थे। बड़ी झुमा, जिसका विवाह हो चुका था, दो पुत्र अभिजीत, निमाई और छोटी पुत्री सोनाली। अभिजीत पढ़ाई पूरी कर नौकरी तलाश कर रहा था, निमाई ने मुश्किल से दसवीं पास की कि बुरी संगत में पड़कर आवारागिरी करने लगा। सोनाली का अभी कालेज में दाखिला हुआ था।

सोनाली पढ़ने में कोई खास नहीं किंतु बाकी गुणों में निपुण थी। गोरी, सुंदर, नयन नक्श तीखे। सोनाली को जो कोई भी देखता मोहित हो जाता। वैसे तो उसके चाहने वालों की कमी नहीं थी लेकिन वह पड़ोस के युवक सुनील को मन ही मन पसंद करती थी। सुनील को भी वह पसंद थी किंतु कभी कह नहीं पाता था। वह माता-पिता का अकेला पुत्र था। पढ़ाई छोड़ कर उसने गाड़ियों के कल-पुर्जों की दुकान खोल ली थी। वह दुकान पर स्कूटर से जाता था जिसकी आवाज सुनकर सोनाली द्वार पर खड़ी रहती सिर्फ एक झलक देखने के लिए। शाम को भी ऐसा होता। आखिर कब तक यूं चलता। एक दिन फैसला कर कालेज जाती हुई सोनाली से सुनील ने दिल की बात कह ही दी। कहने की देर थी फिर तो मिलने का सिलसिला शुरू हो गया। क्लास छोड़ कुछ पल सुनील के साथ बिताती। छुट्टी के दिन मुश्किल से समय कटता मालूम होता था। पर बकरे की अम्मां कब तक खैर मनाती। एक दिन तो घरवालों को भनक लगनी ही थी। निमाई अपने आवारा दोस्तों के साथ मटरगश्ती कर रहा था कि उसकी नजर स्कूटर पर बैठे सुनील-सोनाली पर पड़ी। लेकिन वहां कुछ कह न सका और इंजन की तरह अंदर-ही-अंदर गरम होकर घर आया।

घर आते ही माता-पिता को बोला—"आपकी लाडली क्या गुल खिला रही है मालूम है आपको? ज्यादा पढ़ाने की चाह थी न! देखिएगा एक दिन नाक कटवा कर रहेगी।" जो कुछ देखा बता दिया। मि. घोष तो चुपचाप अपने कमरे में चले गए। लेकिन सोनाली के आते ही मां पूछ बैठी—"कहां गई थी?" "मां तुम भी कैसा सवाल करती हो? क्या नई बात है जो तुम आज पूछ रही हो," मां से दुलार करते हुई बोली। तब निमाई बोला, "अच्छा तो सुनील के स्कूटर में क्लास होता है, क्यों है न?"

चोरी पकड़ी जाने पर निमाई से बोली, "खुद तो आवारागर्दी करते हो और मुझे कहते हो।" मां दुबारा बोली—"क्या यह सच है?"

सोनाली ने सोचा झूठ बोलने से कोई फायदा नहीं। आखिर बताना तो होगा ही। गुमसुम खड़ी अपनी किताबों को उलटने लगी, फिर मां को देखा जो जवाब के इंतजार में निगाहें गड़ाए थी, पलकें झुकाकर हां में सिर हिला दिया। "चटाक" चांटा उसके गालों पर पड़ा। इस बात के लिए तैयार नहीं थी, गिर पड़ी, किताबें जमीन पर बिखर गईं जिसमें सुनील की तस्वीर झांक रही थी। निमाई लपक कर उसे उठाकर बोला, "जाने कितने दिनों से चल रहा है? किताबों में तस्वीर रखती है।" कहने के साथ ही जेब से लाइटर निकाल तस्वीर जला दी। लपकने के लिए वह बढ़ी किंतु मां ने रोक लिया। अपनी बेबसी पर आंसू आ गए। निमाई कहता हुआ घर से निकला, "उसे देख लूंगा। सोनाली नहीं-नहीं कह रोती हुई बढ़ी, पर मां ने घसीटते हुए कमरे में बंद कर दिया। पिता अपने कमरे से सब कुछ सुनते रहे। फिर मन-ही-मन एक फैसला किया।

निमाई ने अपने दोस्तों के साथ जाकर सुनील की पिटाई कर दी। साथ धमकी भी दी कभी बहन के पीछे न आए। सुनील भी अपने दोस्तों के साथ बदला ले सकता था पर उसने ऐसा नहीं किया क्योंकि वह सोनाली का भइया था।

सोनाली को किसी से मिलने नहीं दिया गया। उसकी सहेलियों से यही कहा गया "दादी के घर गई है।" बेचारी बंद कमरे में पक्षी की तरह छटपटाती रहती पर कैद से आजाद कैसे होती! दो-तीन दिन के बाद मि. घोष पत्नी को बोले,—"बड़ी मुश्किल से लड़का देख आया हूं। कल आ रहे हैं, कह देना कोई गड़बड़ न करे।" और सामान लाने चले गए। सुनकर सोनाली को वज्रपात-सा हुआ। ऐसा जुल्म न करने को चिल्लाती रही। पर पिंजरे में कैद पक्षी

की गुहार बहेलिया सुनता कहां है?

सुनील बिस्तर पर पड़ा था। मां अपने बेटे की हालत पर आंसू बहा रही थी। निमाई धमकी दे गया—"सोनाली की शादी ठीक हो रही है यदि तुमने कोई बाधा डाली तो जिंदा नहीं रहोगे।" मां को बेटा खोने का डर हुआ। अपनी कसम दे उसने सुनील को सोनाली से मिलने से मना कर दिया। 'बिन पानी मछली' की तरह तड़पता रहा।

दूसरे दिन लड़के वाले आकर सोनाली को पसंद कर गए। गुमसुम-सी सोनाली की सादगी ही भा गई उन्हें। एक महीने के अंदर शादी की तारीख तय हुई। मि. घोष तैयारियों में जुट गए। इधर अभिजीत को, जो झुमा के यहां रहकर नौकरी ढूंढ़ रहा था, जीजा के प्रयास से बिजली विभाग में काफी दिक्कतों के बाद नौकरी मिली। यह खबर मि. घोष के लिए अच्छी थी क्योंकि अब वे लड़के की मांग अनुसार सामान जुटा सकेंगे। इसके लिए कर्ज लिया। चिंता नहीं थी। अब बेटे का भी साथ था। बेटी के अरमानों का खून कर इज्जत बचाने में लगे थे।

निश्चित दिन शादी हुई। लेकिन सुनील तक खबर भी नहीं भेज पायी अपनी बेबसी की। सब रस्मों को चाबी की गुड़िया की तरह निभाती हुई विदाई के बाद पति गृह को प्रस्थान कर गई। तब मां-बाप ने चैन की सांस ली। आखिर उनकी नाक जो बच गई थी।

अभिजीत अपनी नई नौकरी के कारण फौरन चला गया। इसी तरह दो-तीन महीने गुजर गए। सुनील की हालत देख मां ने जिद कर बेटे का विवाह भी कर दिया है ताकि ध्यान बंट जाए और मां का बहू का अरमान भी पूरा हो जाए। वरना सुनील ने तो सोनाली के जाने के बाद अकेला रहने का फैसला किया था।

अभिजीत अक्सर अपने बास के घर काम के सिलसिले में जाता था जहां उनकी इकलौती पुत्री को देखता था। सपना नाम था उसका। मां बचपन में ही गुजर गई थी। बाप ने भरपूर स्नेह दिया था। अभिजीत को वे अपने हाथों से ही चाय-नाश्ता देती थी। पिता उसके जज्बात को समझते थे। बास खुद अभिजीत को आने को कहते। सपना का उतने बड़े घर में मन नहीं लगता था। कभी वह दोनों लान में बैठे बातें करते। दोनों ही एक दूसरे को पसंद करते थे। बास ने एक दिन सपना से पूछकर अभिजीत के सामने शादी का प्रस्ताव रख दिया। मनचाही वस्तु मिलने पर भला वह क्यों इंकार करता। बास ने पिता से मिलने की इच्छा व्यक्त की। चिट्ठी भेजकर फौरन बुला लिया और बातचीत के बाद विवाह की तिथि निश्चित हो गई।

बास दूसरी जाति के थे। किंतु मि. घोष को कुछ अटपटा लगा उनका यह कहना—"बच्चे जब राजी हैं तब हमें क्या, फिर आज जात-पांत कौन देखता है।"

दामाद बनने के बाद बेटे की तरक्की की बात सुन मि. घोष को मानने पर बाध्य होना पड़ा, सोनाली की शादी का कर्ज भी चुकाना था। फिर सारी तैयारियां बास ही करने वाले थे। मि. घोष को यह भी भय था कि कहीं इंकार करने पर बेटा बगावत कर अलग हो गया तो बुढ़ापे का सहारा कौन रहेगा। दूसरे बेटे से तो उम्मीद बेकार थी जो नालायक था। उन्हें अपने-आप से समझौता करना पड़ा। घर आकर पत्नी को भी समझा-बुझा लिया। मां भी बेटा खोना नहीं चाहती थी, सो राजी हो गई।

अब तक सोनाली ससुराल के अनुसार ढल चुकी थी लेकिन फिर भी उसके दिल में एक टीस थी। अभिजीत की शादी में वह जब आयी तो मौका देख अपने माता-पिता से सवाल पूछा—"क्या मैं पूछ सकती हूं कि मेरे साथ ऐसा अन्याय क्यों हुआ? हमारी और सुनील की एक जाति होते हुए भी आप लोगों ने समाज में इज्जत बनाये रखने के लिए मेरा विवाह दूसरी जगह कर दिया जबकि भइया का विवाह दूसरी जाति की लड़की से कर रहे हैं। यह भेदभाव क्यों?"

थोड़ी देर बाद जवाब मिला, "तुम दोनों में फर्क है! तुम बेटी हो दूसरे घर की अमानत, इज्जत! तुम्हें हमारी पसंद से चलना था, जबकि वह बेटा है हमारे बुढ़ापे का सहारा और हमें उसकी पसंद से रहना है।"

सोनाली को अब बेटा-बेटी होने का फर्क मालूम हो चुका था।

पोठिया ब्लाक,
किशनगंज (बिहार)

गांव में ऊर्जा उत्पादन और संरक्षण

प्रेम भटनागर

ऊर्जा मानव की आधारभूत आवश्यकता है। हमारे दैनिक जीवन में उपयोग में आने वाले उपकरणों में आम तौर पर ऊर्जा का इस्तेमाल होता है।

गांव में रसोई के ईंधन का मुख्य स्रोत आमतौर से लकड़ी और गोबर है। गांवों में आज भी पारम्परिक चूल्हों का ही प्रचलन है। पारम्परिक चूल्हों के बजाय अपारम्परिक चूल्हे अपनाये जाने से पचास प्रतिशत तक ऊर्जा में बचत हो जाती है। गारे मिट्टी से बने ये उन्नत चूल्हे पचास रुपये से लेकर दो सौ रुपये तक की मामूली कीमत पर बाजार में उपलब्ध हैं।

प्रायः ग्रामीण जनता पर यह आरोप लगाया जाता है कि गोबर को उपलों या कण्डों के रूप में चूल्हों में राख कर दिया जाता है। एक सर्वेक्षण के अनुसार आठ करोड़ टन गोबर ग्रामीण चूल्हों में जल कर राख हो जाता है। इस गोबर से ग्रामीण ऊर्जा की 10 प्रतिशत आवश्यकता पूरी होती है। इसी गोबर का खाद के रूप में उपयोग किया जाए तो इससे खेतों में कई गुनी अधिक उर्वरता बढ़ेगी।

उक्त आरोप में निसंदेह दम है। पर यह भी सच है कि बात-बात में ग्रामीण हित की दुहाई देने पर भी ग्रामीण हित की ही सबसे ज्यादा उपेक्षा होती है। मिट्टी के तेल की आवंटित मात्रा में से कितना ग्रामीण जनता तक पहुंचता है यह सर्वविदित है। गोबर और लकड़ी गांव में सुलभ हैं और प्रायः बिना मोल मिलने वाले पदार्थ हैं। इसीलिए वहां इनका प्रयोग ईंधन के रूप में होता है। गांवों में गैस उपलब्ध करा भी दी जाए तब भी महंगी गैस ग्रामीणों की पहुंच के बाहर ही होगी। जब तक ग्रामीण जनता को ईंधन के विकल्प में सस्ती ऊर्जा उपलब्ध न हो तब तक 'गोबर या लकड़ी मत जलाओ' के उपदेश निरर्थक ही हैं।

बायोगैस का आविष्कार इसी समस्या का समाधान है। इस आविष्कार ने 'सांप भी मरे और लाठी भी न टूटे' की उक्ति को चरितार्थ कर दिया है। एक तरफ जहां गोबर से ऊर्जा प्राप्त होती है वहीं दूसरी तरफ इसका खाद के रूप में भी उपयोग किया जाता है। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार देश में प्रतिवर्ष 120 करोड़ टन गोबर उपलब्ध होता है जिससे 2000 मेगाटन ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है।

आज ऊर्जा पर मंडराते संकट को देखते हुए बायोगैस या गोबर गैस संयंत्र एक वरदान ही है। समय की मांग है कि लोगों को गोबर गैस के महत्व और उपयोग की जानकारी दी जाए। आर्थिक संकट की आड़ में इस पर समाप्त की जा रही सब्सिडी यथावत जारी रखी जाए। ग्रामीण जनता को प्रेरित करने के लिए ब्याज मुक्त ऋण की सुविधा और रियायती मूल्य का प्रावधान होना जरूरी है। बायोगैस संयंत्र का मूल्य घटाने के लिए भी प्रयास होना चाहिए।

ग्रामीण रसोईघर में आज भी खाना पकाने में पारम्परिक बर्तनों का इस्तेमाल होता है। यदि खाना पकाने के लिए प्रेशर कुकर, चौड़े और साफ पेंदे वाले मानक उपकरण व अपारम्परिक बर्तनों को अपनाएं तो भी ईंधन के रूप में ऊर्जा की बचत की जा सकती है। इसके अतिरिक्त यदि खाना पकाते समय बर्तन में आवश्यकतानुसार ही पानी डालें और उबाल आ जाने पर आंच धीमी करने तथा खाना पकाने से पूर्व पूरी तैयारी कर लेने के बाद ही चूल्हा जलाने जैसी सामान्य जानकारी ग्रामीण लोगों को दी जाए तो इससे बहुत बड़ी मात्रा में ऊर्जा के अपव्यय को रोका जा सकता है।

गोबर ही नहीं अब गैस कार्बनिक अपशिष्ट से ऊर्जा (बायोगैस) उत्पादित की जाने लगी है। उदयपुर काटन मिल से प्राप्त कचरे से 750 घन मीटर ऊर्जा का उत्पादन किया जाता है जिसकी ऊर्जा 750 किलो कोयले के बराबर है। गांव में या आस-पास ऐसे उद्योग जिनसे ठोस अपशिष्ट पदार्थ निकलता है वहां बायोगैस संयंत्र लगाकर ऊर्जा का उत्पादन किया जा सकता है।

ऊर्जा का नवीनतम स्रोत सौर ऊर्जा है। सूर्य के प्राकृतिक प्रकाश से ऊर्जा प्राप्त की जाती है। सूर्य का प्रकाश बिना किसी भेदभाव और मूल्य के सर्वत्र सुलभ ही है।

सौर चूल्हा खाना पकाने के लिए अपारम्परिक ऊर्जा का एक उपयोगी उपकरण है। इस उपकरण से एक ग्रामीण परिवार आसानी से अपनी खपत ऊर्जा में 66 प्रतिशत की कमी ला सकता है। इन चूल्हों का मानसून के अलावा कभी

भी उपयोग किया जा सकता है। ग्रामीण जगत के लिए इसका विशेष महत्व है। चूल्हे के कंटेनर में दाल या सब्जी मसाले में भून कर चढ़ा दी। दूसरी ओर दूसरे कंटेनर में चावल रखकर और चूल्हे को बंद कर खुले स्थान पर रखकर अन्य काम निवटायें। निर्धारित अवधि के बाद स्वतः भोजन तैयार हो जाएगा। इस प्रकार सौर चूल्हे के इस्तेमाल से ईंधन और समय दोनों की ही बचत हो जाती है। सरकार द्वारा सौर चूल्हे पर अनुदान राशि तथा बैंकों द्वारा कम ब्याज पर ऋण की सुविधा दी जाती है। अतः आवश्यकता है कि ग्रामीण परिवार अधिक से अधिक सौर चूल्हों को अपनाएं।

पारम्परिक चूल्हों में गोबर या लकड़ी न जलाने से ऊर्जा का जहां भारी अपव्यय होता है, वहीं इनसे उठने वाला धुआं वायु को प्रदूषित करता है। धुआं स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। अपारम्परिक बायोगैस चूल्हे तथा सौर चूल्हे प्रदूषणमुक्त हैं। इन अपारम्परिक चूल्हों से ऊर्जा की खपत में भारी कमी आती है। इनका स्वास्थ्य पर भी कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता और इनके प्रयोग से वायु प्रदूषण भी नहीं होता। वायु प्रदूषण विश्व की एक गम्भीर समस्या है। अतः ग्रामीण परिवार इन अपारम्परिक उपकरणों को अपनाकर इस प्रदूषण से बच सकते हैं।

ऊर्जा के विभिन्न स्रोतों में आज विद्युत ऊर्जा आधारभूत ऊर्जा है। आजादी के समय अर्थात 1947 तक विद्युत उत्पादन की क्षमता 1700 मेगावाट थी जो वर्तमान में 70,000 से भी ऊपर पहुंच गई है। जनसंख्या की तीव्र गति से वृद्धि और औद्योगिक विकास से विद्युत की मांग उत्पादन से कई गुना बढ़ गई है। इसका प्रमाण आये दिन बिजली आपूर्ति में कटौती है।

विद्युत ऊर्जा पर मंडरा रहे संकट को देखते हुए विद्युत ऊर्जा का संरक्षण बहुत अधिक जरूरी हो गया है। उपभोग में शहरों की तुलना में गांव नगण्य हैं। एअर कण्डीशनर, फ्रिज, कूलर, माइक्रो ओवन तथा गीजर आदि आज भी शहरों तक ही सीमित हैं परन्तु बिजली कटौती के शिकार गांव ही होते हैं। अतः विद्युत संरक्षण की पूरी जिम्मेदारी केवल शहरों पर ही है। इसके बावजूद बिजली संरक्षण में गांव भी थोड़ा बहुत योगदान कर सकते हैं। गांवों में आमतौर पर बल्ब ही इस्तेमाल होते हैं। अतः बल्ब की जगह ट्यूबलाइट इस्तेमाल कर तथा दिन में केवल प्राकृतिक प्रकाश से काम चलाकर गांव भी बिजली संरक्षण में कुछ राहत दे सकते हैं।

सौर ऊर्जा से अब गांव में रोशनी, कुंए से पानी उलीचने का काम तथा अन्य कृषि या घरेलू उपकरणों का संचालन होने लगा है। सौर प्रकाश वाल्टीयर यंत्र द्वारा सूर्य की रोशनी को सीधा विद्युत ऊर्जा में बदला जाता है। सौर चलित पम्पों से रोशनी तथा अन्य उपकरणों का संचालन होता है। इसी प्रकार गांवों में सौर तथा वायु आधारित, मिश्रित विद्युत उत्पादन संयंत्र लगाये जा सकते हैं। इन संयंत्रों से गांवों के अस्पताल, सामुदायिक केन्द्र, डेयरी तथा अन्य घरेलू उपकरणों के लिए आवश्यक विद्युत ऊर्जा का उत्पादन किया जा सकता है। इन अपारम्परिक ऊर्जा साधनों तथा संयंत्रों से गांवों में ऊर्जा उत्पादन और संरक्षण दोनों ही संभव हैं।

गांधी जी की स्वराज की कल्पना में गांव पूरी तरह आत्म निर्भर होंगे, अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के साधन अपने स्तर पर जुटाकर गांव अन्य पर आश्रित नहीं रहेंगे। गांव में ऊर्जा उत्पादन और संरक्षण अभियान से गांधी जी के स्वराज का स्वप्न साकार होगा। गांव में ही ऊर्जा उत्पादन और उसका संरक्षण कर सही तरीके से ऊर्जा के इस्तेमाल से देश पर मंडराते ऊर्जा संकट से राहत मिलेगी।

35-फतहपुरा (पुराना),
सेवामंदिर मार्ग, उदयपुर-313001

योजना

योजना और विकास को समर्पित भारत के नव निर्माण की प्रमुख पत्रिका

एक प्रति : 5 रुपये **वार्षिक : 50 रुपये**

संपर्क :
व्यापार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पटियाला हाऊस
नई दिल्ली

भारत में जनजातियां : समस्या एवं समाधान

मनोज कुमार द्विवेदी

भारतीय समाज में विभिन्न धर्मों, जातियों और सम्प्रदायों के अनुयायी हैं, इसीलिए इसे अनेकता में एकता का देश कहा जाता है। अनादिकाल से ही यहां के वन्य तथा पर्वतीय क्षेत्रों के एकांत व निर्जन स्थलों में खुले आसमान के नीचे, घास-फूस की झोंपड़ियों व छप्परों में रहने तथा जंगली खाद्य पदार्थों का सेवन करने वाले आदिम समूहों का निवास रहा है। ये समूह अपने पौराणिक परिवेश तथा संस्कृति के अनुरूप ही जीवन यापन करते हैं। इन्हीं समूहों को विकसित लोगों ने आदिवासी, जनजाति, वन्य जाति तथा वनवासी आदि नाम दिए हैं।

भारत में लगभग 300 प्रकार की जन-जातियां पायी जाती हैं जिनमें भील, गौंड और संथाल ऐसी जनजातियां हैं जिनकी जनसंख्या 40 लाख से भी अधिक है। वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार मध्य प्रदेश भारत का सबसे बड़ा जनजातीय राज्य है। जहां पर मुख्यतः पाण्डों, कोरबा, मुण्डा, कोल, गौंड तथा भील आदि जनजातियां पायी जाती हैं। इसके बाद उड़ीसा का क्रम आता है जहां मुख्यतः कोल और गौंड जनजाति पायी जाती हैं। तीसरा स्थान बिहार का है जहां मुख्यतः कोरबा, बैंगा, गौंड, हो, मुण्डा व संथाल आदि जनजातियां पायी जाती हैं तथा इसके बाद आंध्र प्रदेश, गुजरात, राजस्थान और महाराष्ट्र का स्थान है जहां चेचू, गदबा, भील, डुबिया, गौंड, भील, मीणा और भीलों के उपवर्ग की जनजातियां निवास करती हैं।

विभिन्न अध्ययनों से स्पष्ट है कि भारत में जनजातीय गणना का कार्य सर्वप्रथम स्वतंत्रता पूर्व 1881 में किया गया था किन्तु कतिपय अनियमितताओं के कारण सही आकलन नहीं हो पाया। 1931 से जनगणना का कार्य स्थायी रूप से प्रारम्भ हुआ किन्तु 1951 में भारत-पाक विभाजन के कारण इसमें बाधा आई। 1961 से 1991 तक की जनगणनाओं में आदिवासियों की संख्या में लगातार वृद्धि देखी गयी। इससे स्पष्ट है कि देश की बढ़ती आबादी में इनकी वृद्धि दर की भूमिका भी कम महत्वपूर्ण नहीं है जैसा कि तालिका 1.1 से स्पष्ट है।

तालिका 1.1

भारत में जनजातीय जनसंख्या, 1961-91

वर्ष	कुल जनसंख्या (करोड़ में)	जनजातीय जनसंख्या (करोड़ में)	कुल जनसंख्या का प्रतिशत
1961	43.91	3.01	6.87
1971	54.80	3.80	6.93
1981	68.33	5.26	7.69
1991	84.39	6.55	7.76

सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति

आजादी के 48 वर्ष बाद भी भारत में जनजातियों की सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति यथावत है। इनकी मानसिकता रूढ़िवादिता, अंधविश्वास तथा पूर्वाग्रहों से इतनी ग्रसित है कि ये उसके साथ किसी भी प्रकार का समझौता स्वीकार नहीं करते। विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि स्थानीय भाषागत अवरोध आदिवासियों में शिक्षा एवं जागरूकता के अभाव होने में अहम् भूमिका रखता है। अधिकांशतः ये लोग अपनी समस्याओं का निदान आपसी प्रेम, सौहार्द तथा सहभागिता से स्थानीय स्तर पर ही कर लेते हैं।

आदिवासियों के मकान मिट्टी की दीवाल, घास-फूंस, बांस-बल्ली के छप्परों, जंगली झाड़-फूंस के दरवाजों से बने होते हैं, इन्हीं छप्परों में ये रहते हैं, खाते हैं, सोते हैं और जानवरों को भी रखते हैं। इन छप्परों में रहने वाले अधनंगे, भूखे, दीन-हीन तथा गरीबी से जूझते ये आदिवासी अधिकांशतः अपने परिवार के पेट की ज्वाला शांत करने के लिए मजदूरी, मेहनत व जंगलों का सहारा लेकर मामूली आय से परिवार को बमुश्किल दो वक्त की रोटी दे पाते हैं।

भारतीय जनजातीय-समाज अपने सामाजिक, सांस्कृतिक रूढ़ियों, अज्ञानताओं से इतने बंधे होते हैं कि बीमारियों से बचने व ठीक होने के लिये अस्पतालों की शरण न लेकर अपने देवी-देवता की पूजा-अर्चना में विश्वास रखकर उनकी शरण लेते हैं तथा आराध्य देव का आह्वान अपने रक्त तथा बकरे व मुर्गे की बलि देकर बड़ी धूमधाम से स्थानीय वाद्य यंत्रों एवं महिलाओं-पुरुषों के सामूहिक नाच-गानों के बीच करते हैं। जनजातीय महिलाओं में पर्दा प्रथा न के बराबर है और दैनिक पारिवारिक दायित्वों तथा दिनचर्या के उपरान्त निःसंकोच पुरुषों के साथ बराबरी से कड़ी मेहनत, परिश्रम व धनार्जन करती हैं। जनजातीय महिलाओं को कहीं भी मेलों, मंदिरों तथा अन्य कार्यों हेतु जाने में रोक नहीं होती, ये पुरुषों की भांति स्वतंत्र होती हैं। इनके यहां पुत्री-जन्म पर खुशियां मनाई जाती हैं। महिलाओं में जेवर आदि पहनने का शौक भी बहुत होता है जिसे वे अपनी आय के अनुसार पहनती हैं।

आर्थिक स्थिति

भारत के वन्य एवं पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासियों की आर्थिक स्थिति इतनी दयनीय है कि स्वयंसेवी संस्थाओं एवं शासन द्वारा करोड़ों रुपये व्यय करने के बावजूद आज भी इनका शोषण बरकरार है। शासन द्वारा पट्टे के रूप में दी गई भूमि में परिवार के सभी सदस्यों द्वारा कड़ी मेहनत व कठिन परिश्रम करने के बाद भी उत्पादन का अल्प भाग ही मिल पाता है क्योंकि इनकी जमीनों पर अधिकांशतः स्थानीय सम्पन्न व दबंग व्यक्तियों का कब्जा रहता है और अपनी ही जमीन में मजदूरी करके ये प्रतिदिन 15-20 रुपये कमाते हैं।

आदिवासियों की आय वृद्धि के मुख्य स्रोत के रूप में वनों से लकड़ी काटना, फलों-फूलों व जड़ी-बूटियों को लाकर सुखाना विपणन व्यवस्था के अभाव के कारण इन्हें बिचौलियों व तस्करों को अत्यन्त सस्ती दर पर बेचना पड़ता है। ठेकेदार आदि बिचौलियों व तस्करों से मिलकर आदिवासियों की आड़ में वन्य सम्पत्ति का सफाया कर लाखों कमा रहे हैं जबकि आदिवासी हरे वृक्ष की डालों व सूखी लकड़ियों को ही काटकर लाते हैं जिससे मूल वृक्ष सुरक्षित रहता है और फलता-फूलता है। इसके अलावा ये वनवासी अपनी आय को बढ़ाने के लिये पशुधन, कृषि, मजदूरी व अन्य व्यवसायों में कड़ी मेहनत करते हैं। इसके बाद भी आज इनकी आर्थिक स्थिति यथावत है।

समस्याएं

भारतीय जनजातीय समाज वर्तमान में विभिन्न प्रकार की आर्थिक और सामाजिक समस्याओं से ग्रसित है जो मुख्यतः इस प्रकार हैं:

1. अशिक्षा जो रूढ़िवादिता, अज्ञानता, परम्पराओं में अंध-विश्वास के कारण इन्हें आधुनिक सामाजिक व्यवस्था को ग्रहण करने से रोकती है तथा सरकार द्वारा सरकारी सेवाओं में निर्धारित आरक्षण सुविधा का लाभ उठाने से भी वंचित रखती है;
2. निर्धनता जिसके कारण ये कुपोषण, ऋणग्रस्तता, अत्याचार व शोषण के शिकार हैं;
3. जनसंख्या वृद्धि एवं आवासीय समस्या;
4. वनों तथा वन्य-उपजों पर नियंत्रण से आय में भारी कमी;
5. कृषि हेतु उपजाऊ भूमि व सिंचाई व्यवस्था न होना;
6. विकास योजनाओं में सहभागिता का अभाव;
7. सरकारी सुविधाओं, अधिकारों व प्रबंध सूचना प्रणाली की अनभिज्ञता;
8. सरकार द्वारा आवंटित भूमि पर स्थानीय सम्पन्न व दबंग वर्ग का अधिकार;
9. मदिरा-पान, रीति-रिवाजों, रूढ़ियों तथा अंध-विश्वासों को दूर करने हेतु अनुकूल अभिप्रेरणा की कमी;
10. शासकीय अधिकारियों/कर्मचारियों की कर्तव्य के प्रति उदासीनता;
11. विपणन एवं यातायात का अभाव।

शासकीय प्रयास

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सरकार ने योजना आयोग की सिफारिश पर जनजातीय विकास के लिए योजनाएं एवं उपयोजनाएं बनाईं तथा इन्हें सरकारी व गैर-सरकारी संस्थाओं के माध्यम से लागू किया। सरकार द्वारा जनजातीय विकास के लिए करोड़ों रुपये विभिन्न पंचवर्षीय योज़नाओं एवं उपयोजनाओं में व्यय किए गए। इन योजनाओं व उपयोजनाओं के अन्तर्गत शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, आवास, पशुपालन एवं आर्थिक उन्नयन पर विशेष बल दिया गया तथा जनजातीय विकास हेतु आदिम जाति कल्याण विभाग की स्थापना भी की गयी। इसका उद्देश्य भूमि हस्तांतरण, साहूकारी, वन आदि क्षेत्रों को शोषणमुक्त कर पर्यावरण एवं स्वच्छता में सुधार करना था। जनजातियों की शिक्षा में सुधार हेतु स्थानीय स्तर पर ही छात्रवृत्ति युक्त स्कूलों की स्थापना, स्वास्थ्य सेवाओं हेतु अस्पताल एवं तस्करों तथा ठेकेदारों से बचाने हेतु विपणन सुविधाओं के लिये जनजातीय सहकारी विपणन विकास संघों की स्थापना तथा वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कम दर पर ब्याज से ऋण दिलाने के लिए सार्वजनिक बैंकों की स्थापना भी प्रमुख लक्ष्य था।

अभी हाल ही में वर्ष 1995-96 के बजट में गरीबों की आवासीय समस्या को दूर करने हेतु इंदिरा आवास योजना के तहत वर्ष 1994-95 में चार लाख मकान निर्मित कराने के लक्ष्य को बढ़ाकर 10 लाख कर दिया गया है। इसी प्रकार 65 वर्ष से ऊपर वृद्ध गरीबों हेतु 75 रुपये प्रतिमाह पेंशन दिये जाने का प्रावधान किया गया है।

तालिका 2.1

जनजातीय विकास हेतु विभिन्न योजनाओं में व्यय राशि

पंचवर्षीय योजना	वर्ष	व्यय राशि (करोड़ रुपये)
प्रथम	1951-56	19.83
द्वितीय	1956-61	42.92
तृतीय	1961-66	51.05
उपयोजना	1966-69	68.50
चतुर्थ	1969-74	166.34
पांचवी	1974-79-80	489.35
छठी	1980-85	470.00
सातवीं	1985-89	1500.00

गर्भवती महिलाओं को पौष्टिक आहार एवं स्कूली बच्चों को दोपहर का भोजन दिए जाने की योजना भी प्रारम्भ की गयी है। वर्ष 1995-96 के बजट के अनुसार जनजातीय बाहुल्य एक सौ जिलों में राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक, नाबार्ड अनुसूचित जनजातियों की कर्ज की जरूरतों को पूरा करने के लिए सहकारी व क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को 400 करोड़ रुपये की ऋण राशि देगा। केन्द्र सरकार सहित राज्य सरकारें व स्वयंसेवी संस्थाएं भी जनजातीय विकास के पुनीत कार्य में लगी हैं।

समाधान हेतु सुझाव

प्रथम पंचवर्षीय योजना से आज तक शासन द्वारा करोड़ों रुपये व्यय किये गये फिर भी ये लोग अशिक्षा, दारिद्रय एवं सामाजिक कुरीतियों से ग्रसित हैं। इसलिए प्रश्न उठता है कि क्या केवल इनकी समस्याएं आर्थिक प्रयासों से सुलझायी जा सकती हैं। अगर ऐसा होता तो एक भी जनजातीय परिवार समस्याओं से जूझते हुए पाया नहीं जाता। आखिर ऐसा कौन-सा कारण है कि आज तक शासकीय व अशासकीय तंत्र इनके साथ समरसता स्थापित करने में असमर्थ रहा है। हमारे देश में जनजातीय विकास योजना की रूपरेखा एवं क्रियान्वयन में इनकी सांस्कृतिक महत्ता पर ध्यान नहीं दिया गया जिससे सहभागितापूर्वक स्वीकार्यता का अत्यधिक अभाव रहा है।

विकास तो हर मानव की आवश्यकता है और वह इसे प्राप्त भी करना चाहता है। वर्तमान भौतिकवादी युग में बहुत से जनजातीय परिवार ऐसे हैं जिन्होंने वर्तमान आधुनिक समाज से अभिप्रेरित होकर अपनी सांस्कृतिक रूढ़िवादिता, धर्मान्धता, भाग्यवादिता व अकर्मण्यता को तिलांजलि देकर शिक्षा की महत्ता को समझा। देश की कुल आबादी का 7.76 प्रतिशत जनजातीय आबादी का बहुत बड़ा भाग आज भी गरीबी के आंसू बहा रहा है। अतः विकास योजनाओं एवं क्रियान्वयन में इनकी सांस्कृतिक महत्ता एवं सहभागिता को सुनिश्चित करना हमारी अनिवार्यता है। ऐसी योजना को कार्य रूप देने हेतु निम्न मुख्य विकास बिन्दुओं पर ध्यान देना होगा :

1. जनजातीय समाज में व्याप्त रूढ़िवादिता, अंध-विश्वास एवं अज्ञानता को दूर करने के लिए

ऐसी शिक्षा पद्धति का विकास किया जाना चाहिए जो इनकी मूल संस्कृति के अनुरूप हो तथा रोजगार एवं आय वृद्धि में सहायक हो;

2. आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने हेतु स्थानीय स्तर पर वन्य एवं पहाड़ी क्षेत्रों में पाये जाने वाले संसाधनों व कच्चे पदार्थों पर आधारित परम्परागत व्यवसायों को विकसित करने के लिए कुशल, अनुभवी तथा जनजातीय समस्याओं से परिचित प्रशिक्षकों द्वारा समुचित प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किये जाने चाहिए;

3. स्थानीय स्तर पर समस्त विपणन सुविधाओं हेतु समुचित प्रबन्ध किया जाना चाहिए ताकि लोग बिचौलियों का सहारा न लेकर उचित कीमत प्राप्त कर सकें;

4. आवंटित भूमि पर कब्जा दिलाने तथा कृषि से संबंधित समस्त सुविधाएं प्रदान कराने हेतु सक्षम, ईमानदार व कर्तव्यनिष्ठ अधिकारियों की नियुक्ति की जानी चाहिए;

5. प्रत्येक माह में एक बार दृश्य-श्रव्य माध्यमों द्वारा प्रत्येक जनजातीय क्षेत्र में शासकीय नीतियों, जनजातीय सुविधाओं तथा अधिकारों के प्रति जागरूकता की भावना विकसित की जानी चाहिए;

6. वन्य उपजों के उपभोग हेतु आवश्यक कानून एवं शर्तों के अधीन स्वतंत्रता प्रदान की जानी चाहिए;

7. आवासीय तथा पशुपालन संबंधी सुविधाएं सर्वप्रथम आदिवासी क्षेत्रों में ईमानदारी से प्रारम्भ की जानी चाहिए;

8. बालकों/बालिकाओं को बाल श्रम से अधिक वृत्तिका देकर शिक्षा के प्रति प्रोत्साहित किया जाना चाहिए;

9. उचित पोषाहार, पर्यावरण, स्वच्छता तथा पेयजल आपूर्ति संबंधी सुविधाएं शीघ्र प्रदान की जानी चाहिए;

10. महिलाओं व पुरुषों में बढ़ती मद्यपान संबंधी प्रवृत्तियों को रोकने हेतु विभिन्न संचार माध्यमों का प्रयोग निरन्तर करना चाहिए।

11. जनसंख्या नियंत्रण हेतु परिवार नियोजन के प्रति स्थानीय स्तर पर अधिक जागरूकता पैदा करनी चाहिए;

12. सरकार द्वारा नियोजित कार्यक्रमों व सुविधाओं को शीघ्र तथा ईमानदारी से लाभार्थियों तक पहुंचाने हेतु सक्षम अधिकारियों द्वारा समय-समय पर मानीटरिंग व मूल्यांकन किया जाना चाहिए;

13. आदिवासी क्षेत्रों में कार्यरत स्वयंसेवी संस्थाओं को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

जनजातीय विकास की समस्या हमारे समाज का अभिशाप बनकर रह गई है। अतः सरकार को इन क्षेत्रों में अपनी समस्त योजनाओं को लाभार्थी वर्ग तक पहुंचाने में प्रशासनिक अधिकारियों/कर्मचारियों के प्रति जागरूक रहना होगा ताकि ये आदिवासी हमारी विकसित राष्ट्र धारा से जुड़ सकें तथा भारतीय समाज को विकास के मार्ग में ले जाने में सहायक सिद्ध हो सकें।

बी/4 टीचर्स कालोनी,
अतर्रा (बांदा) उ.प्र.।

एक प्रगतिशील गांव के आर्थिक विकास के कारणों की खोज

थूमड़ा गांव का आर्थिक सर्वेक्षण

प्रो. पूरण मल*

अरावली पर्वत की शृंखलाओं में अलवर जिले की राजगढ़ तहसील में एक छोटा सा गांव है थूमड़ा, जिसका नाम भी लोग प्रायः मजाकिया रूप में लेते हैं। रैणी एवं राजगढ़ पंचायत समितियों से मिलकर बनी राजगढ़ तहसील की कुल आबादी में लगभग 60 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति (मीणा) तथा 36 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोग रहते हैं।

अनुसूचित जाति (बैरवा) बाहुल्य थूमड़ा गांव जिला मुख्यालय अलवर से 65 किलोमीटर, तहसील मुख्यालय राजगढ़ से 29 किलोमीटर एवं पंचायत समिति रैणी से लगभग 7 किलोमीटर की दूरी पर दक्षिण-पूर्व में स्थित है। गांव के उत्तर में बहादरपुर, दक्षिण में ग्राम पंचायत मुख्यालय रामपुरा, पूर्व में आकोदा तथा पश्चिम में इटोली एवं कोडिया ग्राम बसे हुए हैं। इस गांव का कुल क्षेत्रफल 327 हेक्टेयर है। इसमें से 117 हेक्टेयर क्षेत्र सिंचित है तथा 105 हेक्टेयर क्षेत्र असिंचित।

थूमड़ा एक पुराना गांव है। ऐतिहासिक प्रमाण के अभाव में निश्चित समय बताना कठिन है, लेकिन यह गांव सैकड़ों वर्ष पूर्व बसा था। किंवदंतियों के अनुसार यह गांव अपने वर्तमान स्थान से पूर्व दो जगह आबाद हुआ एवं उजड़ गया। दोनों जगह पर आज भी खुदाई में मिट्टी के बर्तन एवं अन्य सामग्री प्राप्त होती रहती है।

जनसंख्या

अगस्त 1995 में लेखक द्वारा किये गये सर्वेक्षण के अनुसार गांव की कुल जनसंख्या 791 है जिसमें 421 (53.22 प्रतिशत) पुरुष एवं 370 (46.78 प्रतिशत) महिलाएं हैं। जनसंख्या की दृष्टि से गांव में बैरवा जाती (अनुसूचित जाति) का बाहुल्य है जो कुल जनसंख्या का लगभग 38.17 प्रतिशत है, लेकिन व्यवहार में सामाजिक और आर्थिक जीवन में ब्राह्मण एवं मीणों का दबदबा है। गांव की अधिकांश भूमि, विशेषकर उपजाऊ भूमि इन्हीं जातियों के पास है।

गांव की अर्थव्यवस्था की मुख्य विशेषताएं

व्यवसाय

गांव में कुल 87 परिवार हैं, जो निम्न पेशों में लगे हुए हैं -

सारणी-1

व्यवसाय

क्र. सं.	व्यवसाय	परिवार	प्रतिशत
1.	कृषि	51	58.62
2.	श्रमिक, खेतिहर एवं गैर खेतिहर	15	17.24
3.	राजकीय सेवारत	12	13.79
4.	परम्परागत ग्रामीण व्यवसाय	7	8.05
5.	अन्य	2	2.30
	योग	87	100.00

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि 58.62 प्रतिशत परिवारों की जीविका का मुख्य आधार कृषि है। गांव के दायरे के भीतर कृषि संबंधी अवसर होने के कारण कुछ भारतीय गांवों की भांति इस गांव में भी जमीन पर निर्भरता अधिक है। स्पष्ट है कि गांव की समृद्धि का मुख्य कारण गांव के भूमिहीनों को गांव के भीतर और बाहर गैर खेतिहर रोजगार की प्राप्ति है। गांव के अनेक युवक दिल्ली, जयपुर, अलवर आदि शहरों में राजगिरी, ठेकेदारी एवं मजदूरी कर रहे हैं। गांव के पास के मंडावर महुवा रोड़ एवं रैणी कस्बों में भी कई सदस्य सिलाई, मजदूरी, दुकानदारी करने दैनिक रूप से जाते हैं।

*शिक्षक शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर-4 (राज.)।

अगस्त, 1995 में किये गये सर्वेक्षण के अनुसार कुल 20 व्यक्ति सरकारी सेवा में हैं। सरकारी सेवा के अलावा गांव के तीन-चार सदस्य प्राइवेट संस्थाओं में पदस्थापित हैं। करीब छह युवक सिलाई तथा एक युवक साइकिल रिपेयरिंग का कार्य करता है।

फसल

थूमड़ा गांव में मुख्यतः खरीफ एवं रबी दो फसलें उगाई जाती हैं। फसलों का सिलसिला अब बदल गया है। खरीफ की फसल में मुख्य रूप से बाजरा, ज्वार, मक्का, मूंग, चौला, अरहर, ग्वार, मूंगफली, तिल्ली आदि बोयी जाती है जो प्रायः वर्षा पर निर्भर करती है। अधिक या कम वर्षा में फसलें नष्ट हो जाती हैं। रबी की फसल सिंचित फसल है जो केवल सिंचित क्षेत्र में ही बोयी जाती है। इस फसल में मुख्यतः गेहूं, सरसों, चना, जो, तारामीरा आदि पैदा होते हैं। खाद्यान्न का उत्पादन मुख्य रूप से अपने उपयोग के लिये किया जाता है। कुछ परिवार गेहूं, जौ, चना, बाजरा, ज्वार एवं सरसों बाजार में बेचते हैं। मूंग, चौला आदि का उत्पादन भी अपने इस्तेमाल के लिये किया जाता है। फसलों के अलावा किसान गाजर, बैंगन, भिंडी, टिंडे आदि का उत्पादन सब्जी के रूप में भी कर लेते हैं। गांव में अब अधिकांश रकबे में सरसों की फसल बोई जाती है क्योंकि यह कम पानी में तैयार हो जाती है तथा बाजार से कीमत भी अच्छी मिल जाती है। लेकिन खाद्यान्न, पशुओं के लिये चारे एवं अन्य आवश्यकताओं के कारण गेहूं, जौ भी काफी मात्रा में उगाया जाता है।

सिंचाई

थूमड़ा गांव में सिंचाई का एकमात्र साधन कुएं हैं। गांव में कुल 44 कुएं हैं जिनमें से 40 चालू एवं चार बंद हैं। कुओं का प्रयोग सामूहिक रूप से किया जाता है। 1985 के बाद गांव में कई नये कुओं का निर्माण सरकारी ऋण एवं बैंक ऋणों के सहयोग से हुआ है। अब अधिकांश असिंचित भूमि को इन कुओं ने सिंचित भूमि में बदल दिया है जिससे उक्त भूमि में भी अब दोनों फसलें पैदा होने लगी हैं। सिंचाई हेतु कुओं से पानी निकालने के लिए डीजल पम्प सैट काम में लिए जाते हैं। गांव को विद्युत लगभग पांच वर्ष पूर्व दी गई थी, लेकिन अभी तक केवल दो कुओं का ही विद्युतीकरण हो पाया है। करीब 35 डीजल पम्प सैट इस समय गांव में हैं, जिनमें से कुछ निजी तथा कुछ सरकारी ऋण से खरीदे गये हैं। इसके अलावा आधुनिक औजारों, तौर तरीकों, उन्नत बीज और खाद का प्रयोग प्रचुर मात्रा में होने लगा है। खेती की जुताई-बुआई का अधिकांश कार्य अब ट्रेक्टर से होने लगा है। कुछ परिवार बैल एवं ऊंटों से भी भूमि की जुताई करते हैं।

गांव में अधिक खाद्यान्न और तिलहनी फसल उत्पादन के लिए उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग होने लगा है। गांव में इस वक्त मुख्यतः यूरिया, गवारिया, डी.ए.पी. पोटाश एवं सुपर फास्फेट खादों का उपयोग किया जाता है। इन रासायनिक खादों के अलावा परंपरागत गोबर की खाद एवं पत्तियों की खाद का भी काफी प्रचलन है। प्रगतिशील किसानों ने गोबर की खाद को सही रूप से बनाने के लिए कम्पोस्ट गड्ढे भी बनाये हैं। खरीफ के मौसम में जुलाई के मध्य में कुछ किसान सण एवं ग्वार की बुआई करते हैं तथा एक-डेढ़ माह की फसल हो जाने पर उस खड़ी फसल की जुताई की जाती है जिससे उसकी पत्तियां ठीक प्रकार से भूमि में सड़-गल जाएं एवं आगामी रबी फसल के लिए अच्छे उर्वरक का कार्य करें।

थूमड़ा गांव में खरीफ की अधिकांश फसल छिड़क कर बोई जाती है तथा रबी के मौसम में ज्यादातर फसल पंक्तियों में। कई फसलों को एक साथ मिलाकर बोने की तरफ किसान बड़ी संख्या में उन्मुख हो रहे हैं। उदाहरणार्थ—गेहूं एवं जौ, जौ एवं चना, जौ एवं सरसों तथा खरीफ में बाजरा, ग्वार एवं तिल्ली। गांव में उन्नत कृषि का मुख्य कारण है—कुओं में मीठे पानी की प्रचुर मात्रा एवं उपजाऊ मिट्टी। गांव में एक बीघा में लगभग 10 क्विंटल गेहूं अथवा पांच-छह क्विंटल चने या सरसों पैदा हो जाती है। यदि सिंचाई के लिए नहरें आ जायें अथवा कुछ और कुओं का निर्माण हो जाये तो सैंकड़ों बीघा असिंचित भूमि को सिंचित बनाकर अधिक खाद्यान्न एवं तिलहनी फसलें ली जा सकती हैं। अभी तक गांव में कृषि के योग्य सम्पूर्ण भूमि के लिये पूरी सिंचाई की व्यवस्था नहीं है। अभी भी अधिकतर परिवार केवल मानसून पर निर्भर करते हैं।

अधिक उत्पादन एवं ज्यादा भूमि को सिंचित बनाने के फलस्वरूप गांव में खेतिहर मजदूरों की आवश्यकता बढ़ी

है, जिसके कारण रोजगार के अवसर बढ़े हैं। फसल के तैयार होने के समय तो कई बार श्रमिक मिलना ही कठिन हो जाता है, जिसके फलस्वरूप पड़ोस के गांवों से श्रमिक बुलवाने पड़ते हैं। मजदूरी के रूप में फसल कटाई के लिये 20 रुपये दैनिक स्त्री-पुरुष दोनों को मिलते हैं। आदमी को कृषि कार्यों हेतु मजदूरी के रूप में 40 रुपये प्रतिदिन मिलते हैं। रबी की फसल कटाई की मजदूरी नगद न देकर फसल के रूप में दी जाती है। इसमें गेहूं, जौ के 6 या 8 पूले (बंडल) मजदूर को मिल जाते हैं जिनमें 5 किलो से 10 किलो तक अनाज निकल आता है।

कृषि विकास में सबसे महत्वपूर्ण योगदान क्रय-विक्रय सहकारी समिति, रामपुरा, पंजाब नेशनल बैंक, रैणी एवं अलवर-भरतपुर ग्रामीण आंचलिक बैंक रामपुरा का है। थूमड़ा में उक्त संस्थाओं एवं बैंकों ने कृषि, पशु, कुआं निर्माण एवं अन्य व्यवसाय के लिए ऋण सहायता भी उपलब्ध करवाई है। गांव में जुलाई, 1994 से महिलाओं द्वारा संचालित एक दुग्ध उत्पादन डेयरी शुरू की गई है। डेयरी पर प्रतिदिन औसतन 50 किलो दूध प्राप्त होता है। दूध विक्रेताओं को प्रति 10 दिन में भुगतान प्राप्त होता है। इससे गांव की आमदनी में वृद्धि हुई है तथा खुशहाली का मार्ग खुला है। अलवर दुग्ध उत्पादन सहकारी समिति के सहयोग से संचालित यह डेयरी महिलाओं की जागृति का एक प्रमुख मंच साबित हुआ है। डेयरी की अध्यक्ष, उपाध्यक्ष एवं कुल 7 सदस्य सभी महिलाएं हैं।

गांव के लोगों की आवश्यकताएं

गांव के लोगों के अनुसार उनकी निम्नांकित मुख्य-मुख्य आवश्यकताएं हैं :-

1. गांव में कृषि योग्य समस्त भूमि सिंचित नहीं है। किसानों की मांग है कि एक-दो पाताल तोड़ कुओं का निर्माण यदि सरकार करवा दे तो सैंकड़ों बीघा भूमि को सिंचित बनाया जा सकता है।
2. यह विचित्र बात है कि इतनी समृद्धि होने के पश्चात् भी गांव में न मनुष्यों के लिए और न ही पशुओं के लिये कोई छोटा-मोटा चिकित्सालय है।
3. आजादी के 48 वर्षों के व्यतीत हो जाने के बाद भी गांव में सड़क नहीं है जिससे परिवहन की गंभीर समस्या बनी रहती है। गांववासियों की मांग है कि वर्तमान में निर्माणधीन सड़क को मंडावर से जोड़ा जाए ताकि गांव से परिवहन की समस्या हल हो सके।
4. गांव में लगभग सन् 1960 से एक प्राथमिक विद्यालय चल रहा है, लेकिन इसके क्रमोन्नत नहीं होने की वजह से अधिकांश बच्चों, विशेषकर लड़कियों को, प्राथमिक स्तर से आगे पढ़ने गांव से बाहर नहीं भेजा जाता है।
5. गांव के अनुसूचित जाति एवं अन्य जातियों के कुछ परिवारों की मुख्य समस्या कृषि योग्य भूमि की है। इन समुदायों के पास भूमि नहीं है या मात्र एक-दो बीघा असिंचित भूमि है। इस स्थिति में सभी चाहते हैं कि इन्हें कृषि योग्य भूमि मिल जाये तो ये परिवार भी अपना विकास स्वयं कर सकेंगे।

गांव के लोग भावी विकास के बारे में आशान्वित हैं। नवीन पंचायती राज अधिनियम के तहत सम्पन्न जनवरी, 1995 के चुनावों में सरपंच पद पर गांव के एक अनुसूचित जनजाति के सदस्य पहली बार विजयी हुए हैं।

व्यवसायीकरण के सामाजिक-आर्थिक प्रभाव

किसानों को गेहूं, सरसों एवं चने की बिक्री से और मजदूरों को मजदूरी के रूप में नकद आमदनी होती है। गांव के लोगों की आदतों, प्रवृतियों एवं वास्तविक स्थिति में परिवर्तन का यह मुख्य कारण है। गांव में अब पक्के मकान बनाने एवं आधुनिक रहन-सहन अपनाने की प्रवृत्ति देखने में आ रही है। कुछेक परिवारों के पास फर्नीचर, मेज, कुर्सियां आदि हैं। अधिकांश परिवारों के पास साइकिल, रेडियो, घड़ी जैसे साधन हैं तथा कुछेक परिवारों के पास में टेप रिकार्डर एवं टेलीविजन भी हैं। गांव की अर्थव्यवस्था में एक घरेलू बाजार विकसित हो गया है। उपभोक्ता वस्तुओं की मांग बढ़ गई है। व्यावसायीकरण के कारण ग्रामीण अर्थव्यवस्था का परंपरागत आधार भी बदल रहा है। गांव के दस्तकारों के रोजगार का आधार रिवाज नहीं बल्कि ठेका है। अब मजदूरों को नकद मजदूरी मिलती है। इस कारण से गांव के विभिन्न भूमिहीन वर्गों के परम्परागत परावलम्बन को गंभीर धक्का लगा है। पुरानी उपभोग आधारित अर्थव्यवस्था के स्थान पर फायदे और बाजार पर आधारित नई अर्थव्यवस्था और नये आर्थिक संबंधों का जन्म हुआ है।

इस प्रकार इस आर्थिक सर्वेक्षण के आधार पर कहा जा सकता है कि गांवों में अधिक खाद्यान्न एवं तिलहनी फसलें उत्पादित करने पर बल दिया जाए एवं असिंचित भूमि को सिंचित बनाने में सरकारी स्तर से किसानों को ऋण सहायता आसान तरीकों से मिल सके, तो उस क्षेत्र का सामाजिक और आर्थिक विकास बड़ी तेजी से हो सकता है।

राजस्थान में बिछने लगा सड़कों का जाल

✍ फारूक आफरीदी

चहुंमुखी विकास के लिए यातायात और परिवहन सुविधाओं का विस्तार महत्वपूर्ण है। इस दृष्टि से राजस्थान कभी पिछड़ा राज्य कहलाता था लेकिन आजादी के बाद इस क्षेत्र में तेजी से हुए विकास ने राज्य को विकासशील राज्यों की श्रेणी में ला खड़ा किया।

राजस्थान भौगोलिक दृष्टि से देश का सबसे बड़ा दूसरा राज्य है। इसका क्षेत्रफल 3.42 लाख वर्ग किलोमीटर है तथा 1991 की जनगणना के अनुसार राज्य की जनसंख्या 4 करोड़ 40 लाख है। राजस्थान में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1949 में कुल 13,553 किलोमीटर सड़कें थीं, जिनमें से 794 किलोमीटर डामर की सड़कें, 4,350 किलोमीटर मेटल्ड सड़कें, 2,037 किलोमीटर ग्रेवल्ड सड़कें तथा 6,372 किलोमीटर मौसमी सड़कें थी। राज्य में सड़कों का घनत्व मात्र 3.96 प्रति 100 वर्ग किलोमीटर था। एक लाख जनसंख्या पर मात्र 85.4 किलोमीटर सड़कें थीं। यहां तक कि राज्य के कई जिला मुख्यालय भी सड़कों से जुड़े हुए नहीं थे।

राज्य में 1951 में योजनाबद्ध व्यवस्था के आधार पर सड़कों का निर्माण प्रारंभ किया गया तथा 43 वर्ष के योजनाकाल (1951-1994) में सड़कों के निर्माण पर 514 करोड़ रुपये राज्य योजना में व्यय किए गए। इस अवधि में 45,739 किलोमीटर नवीन सड़कों का निर्माण किया गया। राज्य में 31 मार्च, 94 को कुल 63,078 किलोमीटर सड़कें थीं जिनमें 49,138 किलोमीटर डामर की सड़कें 3,395 किलोमीटर मेटल्ड सड़कें और 10,256 किलोमीटर ग्रेवल्ड सड़कें तथा 289 किलोमीटर मौसमी सड़कें हैं।

सड़क विकास नीति–1994

राज्य के कुल 33,305 गांवों में से 14,125 गांव ही विभिन्न प्रकार की सड़कों से जुड़े हुए हैं जो कि 42 प्रतिशत हैं। राष्ट्रीय औसत 44 प्रतिशत है जबकि पड़ोसी राज्यों हरियाणा में 99 प्रतिशत, गुजरात में 74 प्रतिशत, पंजाब में 99 प्रतिशत और उत्तर प्रदेश में 43 प्रतिशत गांव सड़कों से जुड़े हुए हैं। राज्य में सड़कों की वर्तमान स्थिति और इनकी महत्वपूर्ण आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए राज्य में एक "सड़क विकास नीति" बनाई है। इस नीति के अनुसार 8वीं और 9वीं पंचवर्षीय योजना में कई लक्ष्य निर्धारित किये गये हैं।

सड़क विकास नीति के अंतर्गत आठवीं पंचवर्षीय योजना में 1971 की जनगणना के अनुसार 1000 से अधिक आबादी के सभी गांवों को डामर की सड़कों से जोड़ने, नवीं पंचवर्षीय योजना में 1991 की जनगणना के अनुसार 1000 से अधिक आबादी के सभी गांवों को सड़कों से जोड़ने, राज्य के कुल 9,174 पंचायत मुख्यालयों में से शेष 1,798 पंचायत मुख्यालयों को आठवीं पंचवर्षीय योजना में ग्रेवल्ड सड़क से जोड़ने तथा नवीं पंचवर्षीय योजना में सभी पंचायत मुख्यालयों को डामर की सड़क से जोड़ने, दूर-दराज के क्षेत्रों में मरु क्षेत्र एवं जनजाति क्षेत्र के 750 से अधिक जनसंख्या (1991 की जनगणना) के सभी गांवों को सड़कों से जोड़ने, सभी राजमार्गों एवं मुख्य जिला सड़कों को चौड़ा करने एवं उनका सुदृढ़ीकरण करने, पर्यटन, आर्थिक एवं धार्मिक महत्व के स्थलों की सड़कों को अंतर्राज्यीय सड़कों तथा रेलवे स्टेशनों से जोड़ने का लक्ष्य रखा गया है। साथ ही राजमार्गों एवं अधिक यातायात वाली सड़कों पर पुलों तथा पुलियों का निर्माण कराया जायेगा।

सड़क विकास नीति के अनुसार सड़कों एवं पुलों के निर्माण में आधुनिक तकनीकों का उपयोग किया जाएगा। लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये सड़क विकास नीति में सड़क निर्माण के लिये उपलब्ध सभी संसाधनों को एक स्थान पर लाकर उपयोग करने की नीति निर्धारित की गई है। सार्वजनिक निर्माण विभाग की योजना राशि के अतिरिक्त मंडी की सड़कों के निर्माण के लिये राशि, कृषि, खनिज, सीमा क्षेत्र विकास योजना एवं अन्य योजनाओं से ली जायेगी। इन सभी संसाधनों से आठवीं पंचवर्षीय योजना में यह राशि बढ़कर 3000 करोड़ रुपये हो जायेगी।

एक अन्य क्षेत्र में राजस्थान राज्य ने पिछले वर्ष 1994 में कार्य आरंभ किया है। यह कार्य सड़कों, पुलों और उप-मार्गों के निर्माण के लिये संस्थागत वित्त प्राप्त करने से सम्बन्धित है। यह एक बिल्कुल नया क्षेत्र है और देश में राजस्थान कदाचित प्रथम ऐसा राज्य है जिसने इस प्रकार की पहल की है। संस्थागत वित्त से योजना राशि के अतिरिक्त संसाधन उपलब्ध हो जाते हैं और इस प्रकार अधिक कार्य हो पाता है। संस्थागत वित्त के लिये वित्तीय संसाधन न केवल ऐसी योजनाओं में ही ऋण देते हैं जो कि टोल टेक्स के आधार पर एक निश्चित अवधि में लगाये गये धन की वापसी सुनिश्चित करे वरन् योजना के कुल लागत का 70 प्रतिशत ऋण उपलब्ध कराते हैं। शेष राशि राज्य सरकार को वहन करनी होती है। इस उद्देश्य से राज्य सरकार ने एक सड़क विकास कोष स्थापित करने का निश्चय किया है। वित्त कोष से इस प्रकार का बचा धन "सीड मनी" के रूप में लिया जा सकेगा जिसकी वापसी पथकर (टोल टेक्स) से होगी।

अब तक उपमार्गों, पुलों तथा सुरंगों के निर्माण के लिये 18 योजनाएं बनाई गई हैं। बारह करोड़ रुपये लागत की योजनाएं हुडको तथा 66 करोड़ रुपये से अधिक की योजनाएं अन्य वित्त संस्थानों को ऋण प्राप्ति के लिये भेजी जा चुकी हैं। इनमें से सात परियोजनाओं के लिये लगभग 21 करोड़ रुपये के ऋण की स्वीकृति मिल चुकी है। इन सब योजनाओं में जयपुर, कांकरोली, भरतपुर के उपमार्गों, पार्वती, चम्बल, मोरेल, काली सिंध, जोजरी, करेली, बनास नदी के पुल तथा सुरंग बनाने की महत्वपूर्ण परियोजनाएं सम्मिलित हैं।

राज्य सरकार द्वारा वर्ष 1989 में राज्य के छह राजमार्गों की 868 किलोमीटर लम्बाई को सुदृढ़ एवं चौड़ा करने के लिये 149 करोड़ रुपये की एक परियोजना विश्व बैंक की सहायता से मंजूर की गई। इसी प्रकार इस क्षेत्र में 1971 की जनगणना के अनुसार 1000 से अधिक आबादी के 440 गांव हैं जिनमें से 415 गांवों को सड़कों से जोड़ा जा चुका है। पांच सौ से 1000 तक की आबादी के 500 गांवों को भी सड़कों से जोड़ा जा चुका है।

अंतर-राज्य एवं आर्थिक महत्व की सड़कों के निर्माण कार्यक्रम के अंतर्गत कोटा-बारा-शाहबाद-शिवपुरी सड़क पर काली सिंध और पार्वती नदी पर तथा दौसा-सवाईमाधोपुर-पालीघाट/शिवपुरी सड़क पर, मोरेल नदी पर पुलों का निर्माण-कार्य प्रगति पर है। सामरिक महत्व की सड़कों के कार्यक्रम के तहत जोधपुर-पोखरण सड़क को चौड़ा करने का कार्य चल रहा है। केन्द्रीय सड़क निधि के अंतर्गत लगभग 24 करोड़ रुपये लागत की 59 सड़कों और 6 पुलों के निर्माण कार्य स्वीकृत किये गये थे। ये परियोजनाएं मुख्य रूप से नवीन ग्रामीण सड़कों के निर्माण के लिये 20 जिलों में स्वीकृत की गई थी। दिसम्बर 94 तक 22 करोड़ रुपये से अधिक राशि व्यय कर 51 परियोजनाएं पूर्ण कर ली गई हैं।

दिसम्बर 1994 तक राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 8 जयपुर-दिल्ली मार्ग पर 16.5 किलोमीटर लम्बाई में सड़क को चार लेन में परिवर्तित करने का कार्य, 18 किलोमीटर लम्बाई में सड़क को 3.66 मीटर से 5.50 मीटर चौड़ाई में परिवर्तन का कार्य, 8 किलोमीटर सड़क की नवीनीकरण का कार्य तथा विभिन्न राष्ट्रीय राजमार्गों पर छोटी पुलियों एवं पुलों का निर्माण कार्य पूरा कर लिया गया है।

राज्य के सभी गांवों तक सड़कों का जाल बिछाने पर राज्य सरकार विशेष ध्यान दे रही है। केन्द्र सरकार ने विश्व बैंक के सहयोग से सड़क परियोजनाओं के लिये 148 करोड़ रुपये की स्वीकृति दी है। इन परियोजनाओं द्वारा चार राज्यों के राजमार्गों को सुधार कर उन्हें चौड़ा किया जायेगा।

वित्तीय वर्ष 1995-96 में सड़क क्षेत्र पर 220 करोड़ रुपये की राशि व्यय की जायेगी। इसमें से 95 करोड़ 64 लाख रुपये राजमार्गों के सुधार पर, पर्यटन क्षेत्र की सड़क परियोजनाओं के लिये 10 करोड़ रुपये एवं न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के तहत 93 करोड़ रुपये से अधिक की राशि व्यय की जायेगी। इसी वित्तीय वर्ष में लगभग 350 अतिरिक्त गांवों को सड़कों से जोड़ा जायेगा। ग्रामीण क्षेत्रों में 1,150 किलोमीटर लंबी सड़कें बनायी जायेंगी। वर्ष के अंत तक राज्य में सड़कों की कुल लम्बाई 65 हजार 138 किलोमीटर हो जाने की उम्मीद है। यह इस राज्य के लिये एक बड़ी उपलब्धि होगी।

587, कमला नेहरू नगर, एक्सटेंशन,
तृतीय, पोस्टल कालोनी के पीछे,
जोधपुर-342009

केंचुआ : घिनौना मगर बहुत काम का

डा० विनोद गुप्ता

देखने में केंचुआ भले ही कितना घिनौना क्यों न हो, लेकिन होता यह बड़े काम का है। केंचुआ कितना उपयोगी जीव है, इसका अंदाजा तो आप इसी से लगा लीजिये कि देश-विदेश के कृषि वैज्ञानिक अब इसकी विभिन्न प्रजातियां विकसित करने में जुटे हैं।

केंचुए आपको भले ही फालतू या बेकार की चीज नजर आते हों, पर क्या आप जानते हैं ये किसानों के सबसे बड़े मित्र हैं और भूमि की उर्वरता को बढ़ाकर किसानों को लाभ पहुंचाते हैं? जीवन पर्यन्त कृषि भूमि को उपजाऊ बनाने वाला केंचुआ मरकर भी किसान के लिये मददगार साबित होता है।

विश्व में केंचुओं की करीब 7,000 प्रजातियां पायी जाती हैं। इनमें से करीब 40 प्रजातियां भारत में देखी गयी हैं।

केंचुए अपने नुकीले सिर से बिल खोदते हैं और मिट्टी खाते हैं। केंचुआ प्रतिदिन 16 से 20 गोल छिद्र बनाता है। इस प्रकार जमीन पर प्रतिदिन असंख्य छिद्र बनते हैं।

कृषि वैज्ञानिकों ने अनेक अध्ययनों से पाया है कि केंचुओं द्वारा प्रति वर्ष चार हजार से नौ हजार ग्राम मिट्टी प्रति हेक्टेयर जमीन की निचली सतह से ऊपरी सतह पर लायी जाती है। यदि इस मिट्टी को एक हेक्टेयर क्षेत्र में फैला दिया जाए, तो दस वर्ष में मिट्टी की पांच सेंटीमीटर मोटी तह लग सकती है।

केंचुआ मिट्टी में पाए जाने वाले पोषक तत्व को अपनी आहार नाल द्वारा अवशोषित कर लेता है और अपचित भाग गुदा द्वार के रास्ते से छोटी छोटी गोलियों (फेरोटिमा) के रूप में या घूमती हुई डोरी के रूप में बाहर निकाल देता है। डोरी की लंबाई करीब पांच सेंटीमीटर होती है। केंचुए के मल के ऐसे ढेर को कास्टिग्स कहते हैं। केंचुए द्वारा निष्काषित मल का वजन उस केंचुए के वजन के बराबर होता है।

केंचुए पौधों को नाइट्रोजन उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। केंचुए मिट्टी के साथ-साथ वातावरण में मौजूद नाइट्रोजन लेते हैं। वह मिट्टी केंचुए के पाचक तंत्र में शोधित होकर मल में बाहर आती है। इसमें अधिक मात्रा में नाइट्रोज़न मौजूद होता है। केंचुए अपने मल को पौधों की जड़ों के निकट फैलाते हैं जिससे पौधों को आसानी से नाइट्रोजन उपलब्ध हो जाता है।

कृषि वैज्ञानिकों के अनुसार केंचुए के मल में 40 प्रतिशत यूरिया, 20 प्रतिशत अमोनिया और 40 प्रतिशत अमीनो अम्ल और अन्य पदार्थ उपलब्ध रहते हैं।

केंचुए अकार्बनिक और खनिज पदार्थों को भूमि पर इधर-उधर स्थानांतरित करते हैं। केंचुए की कुछ प्रजातियां भूमि की गहरी सतह से ऊपरी सतह पर मिट्टी को स्थानांतरित कर भूमि की उर्वरता बढ़ाते हैं और भौतिक दशा में सुधार करते हैं।

केंचुओं के भूमि प्रवेश से अनेक छिद्रों का निर्माण होता है, जिनके द्वारा पानी का संचरण अच्छा होता है और वायु संचरण में भी वृद्धि होती है।

केंचुए मिट्टी में उपलब्ध कार्बनिक और खनिज पदार्थों को ग्रहण करके भूमि में वायु-संचार को बढ़ाते हैं। केंचुओं द्वारा ग्रहण किये गये भोजन के कुछ अंश इनके जीवित रहने के लिये उपयोग में लाए जाते है। शेष भाग इनकी आहार नली में अच्छी तरह मिल जाता है। इस प्रकार केंचुए द्वारा छोड़ा गया मूत्र अमोनिया से भरपूर रहता है, जो भूमि में रहने वाले जीवाणुओं के लिये अनुकूल वातावरण तैयार करता है।

विदेशों में किये गये अध्ययनों से पता चलता है कि केंचुए के मल में साधारण मिट्टी की तुलना में डेढ़ गुना चूना, तीन गुना मैग्नीशियम, पांच गुना नाइट्रोजन, साढ़े सात गुना फास्फोरस और ग्यारह गुना पोटेशियम होता है। इसके मल से मिट्टी में उपयोगी बैक्टीरिया की वृद्धि की दर बढ़ जाती है।

केंचुए नमी युक्त स्थानों पर जैसे नदियों के किनारों पर और बगीचों में पाये जाते हैं। ये अच्छी वायु संचरण वाली मिट्टी में रहना पसंद करते हैं क्योंकि जीवित रहने के लिये इन्हें वातावरण में से आक्सीजन की आवश्यकता होती है।

केंचुए पानी में काफी समय तक डूबे रहकर भी जीवित रह सकते हैं। इनकी कई प्रजातियां आक्सीजन के बगैर भी कई घंटों तक जीवित रह सकती हैं।

केंचुए भूमि की ऊपरी सतह से लेकर 30 से 50 सेंटीमीटर की गहराई तक पाए जाते हैं। सूखे और गर्म वातावरण की स्थिति में जमीन में और अधिक गहराई में जाकर अपने को गेंद के आकार में बनाकर जीवित रहते हैं। केंचुआ प्रकाश के प्रति काफी संवेदनशील होता है। यह उजाले में इधर-उधर भागने तथा छिपने की कोशिश करता है।

केंचुए तो आपने बहुत से देखे होंगे लेकिन क्या आप इस बात पर यकीन करेंगे कि कोई केंचुआ 7.6 मीटर (22 फुट) लंबा भी हो सकता है। जी हां, यह विश्व का सबसे लंबा केंचुआ है और यह दक्षिण अफ्रीका में पाया जाता है। यह माइक्रोकैटस रेप्पी प्रजाति का केंचुआ है।

विश्व के सबसे छोटे केंचुए कीटागास्कर एनजेली प्रजाति के होते हैं। इनकी लंबाई 0.019 इंच से भी कम यानि 0.5 मिलीमीटर होती है।

अतः यह कहना गलत नहीं होगा कि केंचुए मनुष्य के कृषि कार्य में संलग्न होने से बहुत पहले से मिट्टी की जुताई कर रहे हैं।

केंचुए का जीवनकाल बहुत छोटा होता है परंतु इसके बावजूद इसका काम बहुत बड़ा होता है।

सुदामानगर एक्सटेंशन,
रामटेकरी, मंदसौर-458001

सफलता की कहानी

विकलांगता बाधक नहीं

श्रीमती अर्चना दत्ता
संयुक्त निदेशक
क्षेत्रीय प्रचार निदेशालय, देहरादून

अल्मोड़ा जनपद के स्याल्दे विकास खण्ड के गांव कैहड़ में खट्-खट-खट् की आवाज प्रतिदिन सुबह से देर रात तक सुनी जा सकती है। यह आवाज गांव के ही एक कर्मठ युवा चन्दन सिंह की बैसाखी की है, जो अपने लघु व्यवसाय में जुटे होने के साथ राजकीय महाविद्यालय स्याल्दे में बी. ए. का छात्र है।

बचपन में ही चन्दन सिंह पर विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा, वह पोलियो का शिकार हो गया तथा पिता का साया सिर से उठ गया। ऊपर से तीन भाई बहनों के भरण पोषण का दायित्व अलग से था। आमदनी का कोई विशेष साधन न था। वह परेशान तो था परन्तु हताश नहीं हुआ। बारह वर्ष की अल्प आयु में ही उसने बिना किसी की मदद लिए मुर्गी पालन शुरू कर दिया। देखते ही देखते उसका धन्धा 20 मुर्गियों के एक छोटे से फार्म में बदल गया। इससे उसको गुजारे लायक आमदनी होने लगी।

तदुपरान्त वन विभाग की मदद से उसने 500 पौधे लेकर अपनी जमीन में लगाए, सिंचाई की कोई सुविधा उपलब्ध न थी, पहाड़ी इलाके में 200 मीटर की दूरी से पानी लाकर इनकी सिंचाई करना कोई आसान काम न था। उसका यह सपना साकार न हो सका परन्तु उसने हिम्मत नहीं हारी। गांव में ही उपलब्ध कच्चे माल से फुरसत के समय उसने कृषि कार्यों तथा मवेशियों हेतु प्रयोग में लाई जाने वाली रस्सियां आदि बनानी शुरू कर दीं। इनकी बिक्री से उसे अतिरिक्त आमदनी होने लगी।

वर्ष 1989 में अपनी जमा पूंजी से चन्दन सिंह ने एक घोड़ा खरीदा तथा एक व्यक्ति की मदद से उसे काम पर लगा दिया। पहाड़ी क्षेत्र में घोड़े से उसे रोजाना 50-60 रुपये की आमदनी होने लगी। अपने परिवार, घोड़े तथा उसकी देखभाल हेतु रखे गये श्रमिक पर होने वाले खर्च के अलावा अब उसकी 300 रुपये मासिक बचत होने लगी। नियमित बचत के फलस्वरूप अर्जित पूंजी से चार साल बाद उसने दूसरा घोड़ा खरीद लिया। इसके साथ ही उसकी आमदनी बढ़ने लगी। उसके रिश्तेदार ही नहीं बल्कि ग्रामवासी भी उस पर गर्व करने लगे। अपने गांव के दो अन्य बेरोजगार युवकों को उसने इसी राह पर चलने की सलाह दी, जिन्होंने उसकी बात मान ली। इनमें से एक युवक नैनसिंह जन्म से ही गूंगा है।

वर्तमान में इन युवकों के चार घोड़े भवन निर्माण सामग्री ढोने, दुकानों हेतु खाद्य सामग्री पहुंचाने तथा राशन आपूर्ति आदि कार्यों में जुटे हैं। चन्दन सिंह अपनी पढ़ाई जारी रखे हुए है तथा छोटे-मोटे सरकारी ठेके लेने लगा है।

हमेशा कुछ कर गुजरने की ललक एवं प्रबल इच्छा शक्ति वाले चन्दन सिंह के लिए विकलांगता कोई मायने नहीं रखती। ठीक ही कहा है, ईश्वर उनकी मदद करता है जो अपनी मदद स्वयं करते हैं।

पुस्तक समीक्षा

लोकतंत्र गांवों की ओर

विद्या भूषण

संविधान की धारा 243 व के अन्तर्गत संविधान के 73वें और 74वें संशोधनों को लागू करने के साथ ही राज्यों के लिए इसी प्रकार के विधेयक पारित करना आवश्यक हो गया जिससे राज्य स्तर पर स्वायत्त संगठनों को शक्तियां मिल सकें। हमारे पूर्वजों ने ऐसी स्वायत्तशासी संस्थाओं की ही परिकल्पना की थी जिन्हें पंचायती राज संस्थाओं के नाम से जाना जाता है। गांधी जी का सोचना था कि प्रत्येक गांव को आत्म-निर्भर होना चाहिए और अपने मसले अपने आप सुलझाने में सक्षम होना चाहिए। स्वतन्त्रता के पश्चात् यद्यपि पंचायती राज संस्थाएं बनी रहीं, लेकिन इनमें आम जनता की भागीदारी नहीं रह पायी। फलस्वरूप ग्रामीण भारत का विकास तेजी से नहीं हुआ।

संसद द्वारा पंचायती राज अधिनियम पारित करने के बाद वाणी (वालंटरी एक्शन नेटवर्क इंडिया) ने गैर-सरकारी संगठनों के मध्य इस बहस को आरम्भ किया।

ग्रामीण जनता तक पहुंचने के प्रयास में वाणी ने कुछ विशेषज्ञों की मदद से राज्यों के पंचायती राज अधिनियम का एक विश्लेषण प्रस्तुत किया। इसमें डा. महीपाल ने आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान और उत्तर प्रदेश का विश्लेषण किया। असम, विहार और उड़ीसा का अध्ययन सीमा गायकवाड़ ने किया। यश चौहान ने तमिलनाडु और त्रिपुरा तथा चंदन दत्ता ने पश्चिम बंगाल का विश्लेषण किया।

पुस्तक में कुछ परिशिष्ट भी शामिल किये गये है जिनमें 1992 में पारित 73वें और 74वें संविधान संशोधन, संविधान की पांचवीं अनुसूची और प्रख्यात समाजशास्त्री बी. के. रायबर्मन द्वारा आदिवासी क्षेत्र में स्व-शासन और '73वां संविधान संशोधनः एक आलोचनात्मक समीक्षा' शामिल है। प्रत्येक राज्य का सामाजिक, आर्थिक और पंचायती राज संस्थाओं का विवरण भी इस पुस्तक में दिया गया है।

राज्यों द्वारा पंचायती राज अधिनियम पारित हो जाने के बाद भी पंचायत सदस्य अपने अधिकारों के विषय में जागरूक नहीं हैं, जबकि आम ग्रामीण जनता की पहुंच ग्राम सभा तक ही होती है। परन्तु ऐसा लगता है कि ग्राम-सभा एक स्वतंत्र निकाय न होकर ग्राम पंचायत और जिला परिषद की कोई उपसमिति है। ग्राम-सभा को कोई विशेष अधिकार नहीं है। सारी आर्थिक शक्तियां ग्राम पंचायत और जिला परिषद के हाथों में केन्द्रित हैं। अधिकांश राज्य सरकारों ने आर्थिक शक्तियों को अपने पास ही बनाये रखा है। उत्तर प्रदेश में खण्ड विकास अधिकारी को पंचायत का मुख्य कार्यकारी अधिकारी बनाया गया है। प्रदेश की पंचायती राज अधिनियम धारा 48(2) के अन्तर्गत वह जिला परिषद को किसी भी श्रेणी में नियुक्तियों का अधिकार दे सकता है जिसका वेतन क्षेत्र पंचायत द्वारा निर्धारित किया जायेगा। धारा 52 के अनुसार ब्लाक प्रमुख को मुख्य कार्यकारी अधिकारी की वार्षिक आचरण रिपोर्ट लिखने का अधिकार होगा।

हरियाणा, राजस्थान और आन्ध्र प्रदेश में पंचायत के चुनाव लड़ने के लिये दो बच्चों का नियम अनिवार्य कर दिया गया है। ऊपर से देखने में तो यह अच्छा कदम माना जा सकता है परन्तु दलितों और पिछड़े वर्गों के लिए शुभ नहीं है। राज्य विधान सभाओं और संसद को सर्वप्रथम अपने आप पर यह कानून लागू करना होगा। बिहार में राज्य सरकार द्वारा पंचायत के मुखिया और उपमुखिया को हटाने का प्रावधान (उसके आचरण और कार्य के प्रति लापरवाही के आरोपों पर) स्वायतत्ता की भावना के विरुद्ध है; हालांकि निगरानी समितियों का गठन कर बिहार ने एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया है।

गुजरात में पंचायती राज संस्थाएं अधिक लोकतांत्रिक हैं क्योंकि उच्च श्रेणी की संस्था अपने से निम्न श्रेणी की संस्था पर नियन्त्रण रखती है। जिला परिषद स्तर पर अपील कमेटियों की व्यवस्था का स्वागत किया जाना चाहिए। डा. महीपाल ने कहा है "स्वशासी निकाय की श्रेणी में उन संस्थाओं को रखा जा सकता है जो निम्न शर्तें पूरी करती हों :

क संस्थागत अस्तित्व—इसमें निर्णय जन प्रतिनिधियों द्वारा किया जाता हो।

ख संस्था की क्षमता—इसके अन्तर्गत संस्था को स्वतन्त्र रूप से नियम बनाने की शक्ति प्राप्त हो।

(शेष पृष्ठ 44 पर)

मखाने की उन्नत खेती

प्रमोद कुमार राउत

मखाना एक पौष्टिक सूखा फल है। इसमें 76.9 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 9.7 प्रतिशत प्रोटीन, 0.1 प्रतिशत वसा, 1.3 प्रतिशत अन्य लवण एवं 12 प्रतिशत नमी पायी जाती है। देश में कुल मखाना उत्पादन का 90 प्रतिशत बिहार, 7 प्रतिशत असम एवं उत्तर प्रदेश तथा 3 प्रतिशत तराई क्षेत्र में होता है। बिहार के मधुबनी, दरभंगा, सहरसा, चम्पारण, पूर्णिया तथा कटिहार जिले में इसका उत्पादन होता है। असम के गुवाहाटी, शिवसागर एवं जोरहाट जिले तथा उत्तर प्रदेश के गोंडा एवं बहराइच जिले में इसका उत्पादन होता है।

मखाने की खेती उस क्षेत्र में की जाती है जहां सर्वदा पानी लगा रहता है। वैसे इसकी खेती के लिए तालाब उपयुक्त है। बहुवार्षिक नदियों में भी इसकी खेती की जाती है जहां पानी का बहाव कम रहता है अथवा स्थिर रहता है । मखाने की खेती बलुआही मिट्टी को छोड़कर शेष सभी प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है। परन्तु केवाल एवं दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। तालाब में मखाने और मछली दोनों की खेती साथ-साथ नहीं की जा सकती है। यदि तालाब में जलकुम्भी या खर-पतवार हो तो उसे निकाल देना चाहिए।

मखाने के बोने एवं खुरपने की विधि :

मखाने की बुआई का उपयुक्त समय नवम्बर-दिसम्बर माह है। मखाने के बीज (कच्चा मखाना) को 'गुरी' कहा जाता है। गुरी काले रंग, गोल आकार, छिलका मोटा तथा कड़ा होता है। वैज्ञानिकों द्वारा अब तक इस पर आनुवंशिक शोध कर उन्नत किस्म का बीज विकसित नहीं किया गया है।

प्रति हेक्टेयर औसत आकार के 100-125 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। बीज को धूप से अलग छाया में एक सप्ताह रखकर अंकुरित किया जाता है। चूंकि मखाने का पौधा करीब एक मीटर जगह घेरता है इसलिए बीज को उतनी ही दूरी पर डाला जाता है। वैसे उस क्षेत्र में जहां मखाने की खेती पूर्व में की गयी होती है, आवश्यकतानुसार तीन वर्ष के अन्तराल पर बीज का उपयोग किया जाता है। पौधे की संख्या कम पाये जाने या स्थान खाली रहने की स्थिति में मार्च-अप्रैल माह में अधिक पौधों की संख्या वाले तालाब में से पौधे निकाल कर कम पौधे वाले तालाब में रोपनी की जाती है। गर्मी के दिनों में कभी-कभी तालाब में पानी की सतह काफी कम हो जाती है, जिसके कारण तालाब के किनारे के पौधे सूखने लगते हैं। ऐसी स्थिति में पम्प सेटों से आवश्यकतानुसार तालाब में पानी देना आवश्यक हो जाता है।

कीट व्याधि का प्रकोप :

मखाने के पत्ते पर बहुत छोटे आकार के भूरे रंग के कीट का प्रकोप होता है। ये कीट पत्ते के रस को चूसते हैं तथा पौधों की वृद्धि रुक सी जाती है। इसके निराकरण के लिए बी.एच.सी. 5 प्रतिशत धूल का भुरकाव या सेबीज का उपयोग प्रभावी पाया गया है। कभी-कभी पौधे गलने लगते हैं। इस गलन को रोकने के लिए सेवोडोल नामक दवा एक लीटर प्रति हेक्टेयर के दर से उपयोग करना उपयुक्त है।

मखाने तैयार करने की अवधि :

मखाने की फसल आम तौर पर जुलाई से सितम्बर माह तक तैयार हो जाती है। फूल निकलने के 10-15 दिनों के बाद फल लगने लगता है। जैसे ही फल पकने लगता है, वैसे ही पुष्प तथा पत्ते सड़ने लगते हैं और अन्त में एक पुटका के फट जाने से फल अलग होकर पानी की निचली सतह पर गिर जाता है। एक पौधे में 10-15 पुटके पाये जाते हैं और प्रत्येक पुटके में 100-200 ग्राम कच्चा मखाना 'गुरी' मिलता है।

पानी से कच्चा मखाना 'गुरी' निकालने की विधिः

मखाने को पानी से निकालने का कार्य प्रायः मल्लाह ही करते हैं। खरपतवार पहले साफ कर लिया जाता है। उसके बाद पानी में ही 6-8 मजदूर एक बांस या खुटा गाड़ देते हैं, जिसे 'काड़ा' कहा जाता है। क्षेत्रफल एवं मजदूरों

की उपलब्धता के अनुसार काड़े की संख्या निर्धारित की जाती है। बार-बार पानी के अन्दर हाथ से गुरी बटोरकर काड़ा के पास इकट्ठा किया जाता है। उसे बांस के महीन गाज में भर कर बाहर सतह पर लाया जाता है। इकट्ठे किए गए गुरी के ऊपर गोलाई में मजदूर पैर दबाते हुए चक्कर लगाते हैं। फिर पानी में गाज के सहारे झिल्ली छुड़ायी जाती है।

उपज

मखाने की उपज तालाब की उर्वरा शक्ति, बीज के किस्म, बीज बोने तथा पौधा रोपने एवं पानी की स्थिति पर निर्भर करती है। औसतन प्रति हेक्टयर 20-25 क्विंटल गुरी का उत्पादन होता है।

मखाने तैयार करने की विधि

मखाने तैयार करने की विधि पूरी तरह वैज्ञानिक रख-रखाव पर आधारित है। मल्लाह जाति के लोग अपने अनुभव के आधार पर इस कार्य को करते हैं। इस कार्य में करीब 10 हजार से अधिक मजदूरों की रोजी-रोटी चार महीने तक चलती है।

मखाने की खेती के विकास हेतु कुछ उपयोगी सुझाव

- तालाबों या जलाशयों का जीर्णोद्धार
- मखाने की खेती पर विस्तृत अनुसंधान
- अनुमंडल एवं जिला मुख्यालयों में कम से कम एक निश्चित बाजार प्रांगण की स्थापना जिससे बिचौलियों के चंगुल से उत्पादनकर्ता बच सकें।
- मखाने की खपत बढ़ाने हेतु पैकेट में तैयार मखाने की बिक्री।
- प्रोसेसिंग प्लांट उत्पादन वाले क्षेत्रों में लगाया जाए।

हिन्दी पत्रकारिता विभाग,
भारतीय जन संचार संस्थान,
अरुणा आसफ अली मार्ग,
जे. एन.यू., न्यू कैम्पस,
नई दिल्ली 110067

(पृष्ठ 42 का शेष)

पुस्तक समीक्षा...

ग वित्तीय रूप से सक्षम—जो अपने दायित्वों के निर्वाह के लिए आवश्यक स्रोत उपलब्ध करने के लिए उचित अधिकार रखती हो।

पुस्तक में सभी राज्यों का गूढ़ विश्लेषण किया गया है। फिर भी कुछ निष्कर्ष निष्पक्ष नहीं लगते। चन्दन दत्ता ने पश्चिम बंगाल में पंचायत संस्थाओं के भली प्रकार काम करने की बात कही है। वाम मोर्चा सरकार ने अक्सर यह कहा है कि पश्चिम बंगाल में कोई पिछड़ी जातियां नहीं है। अतः ये जांच का विषय हो सकता है कि इन जातियों की क्या स्थिति है। पंचायत संस्थाओं में पिछड़ी जातियों के व्यक्ति यह मानने को तैयार नही हैं कि पश्चिम बंगाल में जाति विद्वेष समाप्त हो गये हैं।

जिन राज्यों की पंचायत संस्थाओं का विश्लेषण नहीं हो पाया है, उन पर काम करने की आवश्यकता है। यदि गैर-सरकारी संगठन पंचायत नेताओं और ग्रामीण जनता को जागरूक करने का कार्य शुरू करते हैं तो 'वाणी' के प्रयास को सफल माना जाना चाहिए।

पुस्तक का मूल्य बहुत कम है। समाज विज्ञान के अध्येताओं, पंचायत नेताओं, सरकारी अधिकारियों और गैर-सरकारी संगठनों के लिए अत्यावश्यक पुस्तक है।

पुस्तक का नाम	:	राज्यों के पंचायत अधिनियम : एक आलोचनात्मक समीक्षा
लेखक	:	डा० महीपाल व अन्य
प्रकाशक	:	वाणी, एच-17/1 मालवीय नगर, नई दिल्ली
मूल्य	:	70 रुपये
पृष्ठ	:	275

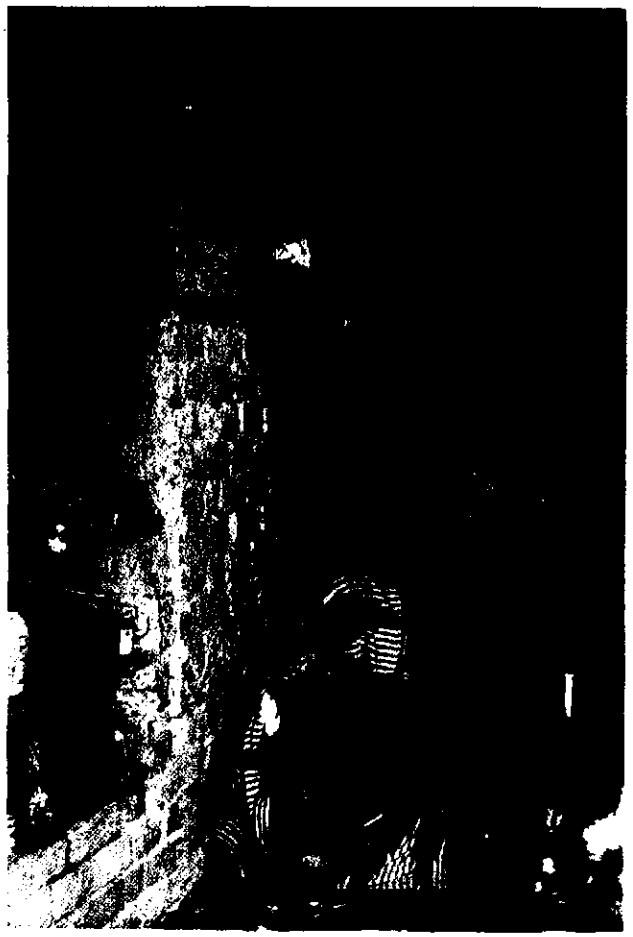

ग्रामीण क्षेत्र में गोबर गैस चूल्हें पर खाना तैयार करती हुई एक महिला। इस तरह गोबर जैसे उपयोगी पदार्थ का दोहरा लाभ उठाया जाता है।

(लेख पृष्ठ 29 पर)

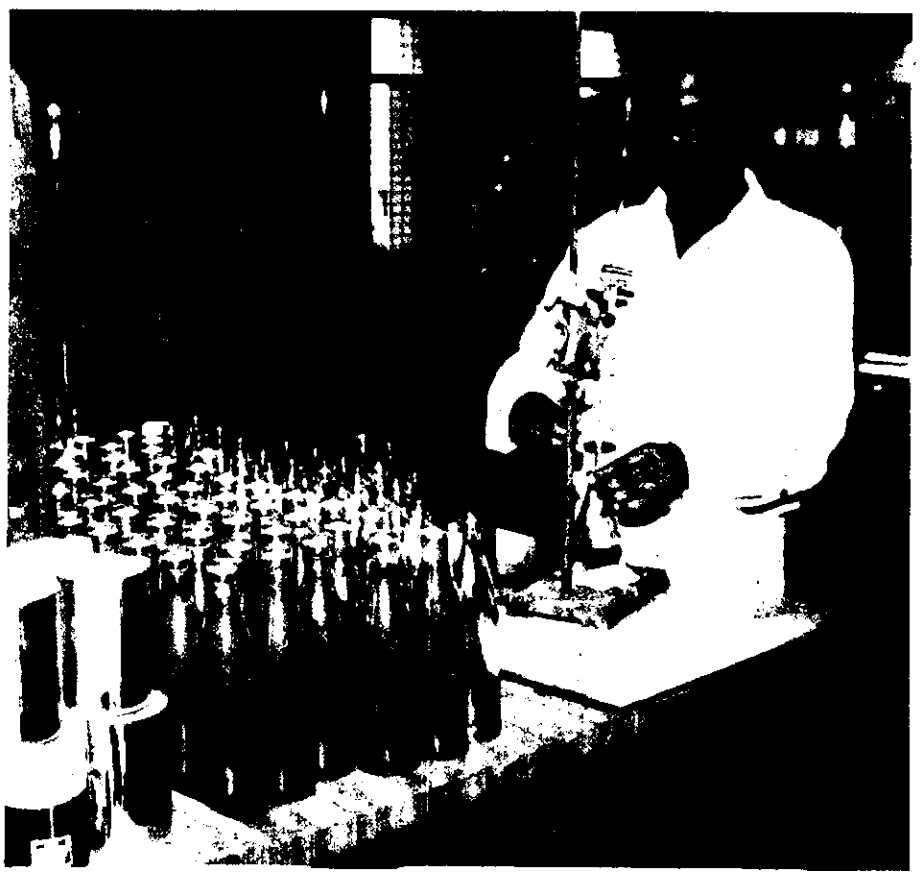

तेजी से ग्रामीण विकास के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि आधारित उद्योग लगाना समय की मांग है। इसी तरह के एक उद्योग में उत्पादन का दृश्य।

(लेख पृष्ठ 25 पर)

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी (डी एल) 12057/95
पूर्व भुगतान के बिना डी. पी. एस. ओ. दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू डी एन-55

R.N./708/57
P & T Regd. No. D (DL) 12057/95
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और आकाशदीप प्रिन्टर्स, नई दिल्ली-110002 द्वारा मुद्रित